गांधीजी

लेखक

जुगतराम दवे

नवजीवन प्रकाशन मंदिर
अहमदाबाद
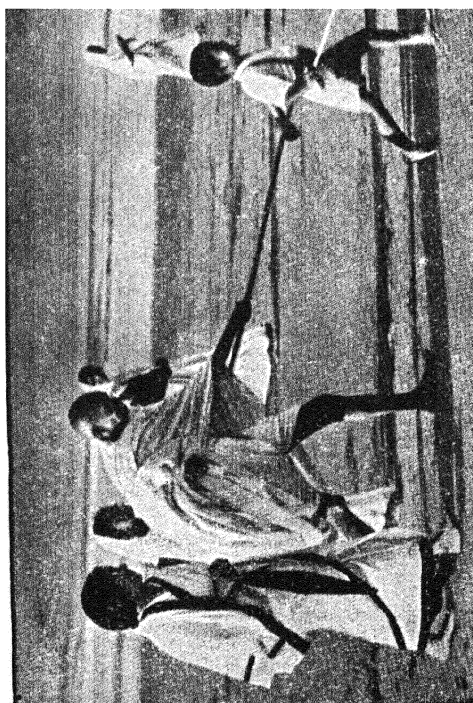
गांधीजी

लेखक
जुगतराम दवे
अनुवादक
काशिनाथ त्रिवेदी

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर
अहमदाबाद

प्रस्तावना

पूज्य गांधीजीकी साठवीं जयन्तीकी यादमें ये रेखाचित्र पहली बार लिखे गये थे। तबसे बरसों बीत चुके हैं, और अीश्वरकी करुणासे गांधीजीका जीवन बालकसे भी अधिक जोशके साथ बढ़ता रहा है।

स्वभावत: अिस अवसरपर कुछ नये रेखाचित्र अिसमें शामिल किये हैं। पुराने चित्रोंकी वस्तु और क्रममें भी कुछ परिवर्तन किये हैं।

गुजरातके बालक अिसे अुमंगके साथ पढ़ें और बापूजीकी आत्माको सुख पहुँचानेवाले बनें!

वेड़छी आश्रम,
अुद्योगशाला
ता० १३–५–१९३९

जुगतराम दवे

बालमित्रोंसे

पिछले बारह बरससे गुजरातके बालक अिस पुस्तकको बड़े चावके साथ पढ़ते आ रहे हैं। बारह बरस पहले श्री जुगतरामभाअीने अिसे गुजरातके हमारे बालमित्रोंके लिअे लिखा था। अुन्हीं दिनों मैंने अिसका अेक अनुवाद किया था, जो बादमें कहीं लापता हो गया। बारह साल बाद अबकी मुझे मौका मिला और मैंने अिसका दुबारा अनुवाद किया।

पुस्तक आपके हाथमें है। आप अिसे पढ़िये। अुत्साह और अुमंगके साथ पढ़िये। बार बार पढ़िये और पढ़कर गांधीजीके जीवनको समझनेकी कोशिश कीजिये।

अीश्वर करे, पूज्य गांधीजीके जीवनकी ये झाँकियाँ हममेंसे हर अेकको अूँचा अुठाने और आगे बढ़ानेवाली हों!

गांधी-सप्ताह
२–१०–'४१

काशिनाथ त्रिवेदी

सूची

गांधीजी

१

कहाँके हैं ?

अगर कोअी पूछे — 'गांधीजी कहाँके हैं ?'

तो पोरबन्दर सबसे पहले कह अुठेगा — 'मेरे यहाँके हैं। यहीं अुनका जनम हुआ है।'

सागरके अुस पारसे फिनिक्स और टॉल्स्टॉय आश्रम पुकार अुठेंगे — 'भाअी ! अुनका सच्चा जनम तो हमारे यहाँ हुआ। क्या अितने ही में भूल गये ?'

अहमदाबाद कहेगा — 'लेकिन आश्रम तो अुन्होंने मेरी साबरमतीके किनारे बसाया था न ?'

पूना अपना हक़ जताते हुअे कहेगा — 'यरवड़ाका जेल तो मेरा है न ? बापूका 'यरवड़ा मंदिर', अुनका वह 'जेल महल', क्या अिस तरह भूल जानेकी चीज़ है ?'

बिहारका किसान क्यों पीछे रहने लगा ? वह कहेगा — 'आपकी जो मरज़ी हो, कह लें; मगर गांधीजी हैं तो हमारे ! आपको क्या पता कि हमारे नीलके खेतोंमें अुन्होंने कितने-कितने चक्कर काटे हैं ?'

क्या पंजाब चुपचाप अिन दावोंको सह सकता है ? नहीं, वह अपनी बुलन्द आवाज़से पूछेगा — 'क्या आप अिस हक़ीक़तसे अिनकार करना चाहते हैं कि गांधीजीको जगानेवाला, होशमें लानेवाला, मेरा जलियाँवाला बाग ही है ?'

कलकत्ता कहेगा —‘ लेकिन भाअी, असहयोगका बिगुल तो मेरे आँगनमें बजा था न ? ’

बम्बअी पूछेगी —‘ पर मेहरबान, सत्याग्रहका आरम्भ करने तो वे मेरे ही घर आये थे न ? ’

बारडोलीका दावा भी सुनने लायक़ होगा। वह कहेगी — ‘ नक्कारखानेमें तूतीकी आवाज़ भला कौन सुनेगा ? पर सच तो यह है, कि गांधीजीने लड़ाअीके लिअे मैदान मेरा ही चुना था। ’

अिसी तरह दिल्ली भी गांधीजीको अपना समझती है; क्योंकि गांधीजीने अपने अुपवासके पवित्र अिक्कीस दिन वहीं बिताये थे। बेलगाँवको अपना दावा किसीसे कम नहीं मालूम होता। हिन्दुस्तानके राष्ट्रपतिका ताज बेलगाँवकी महासभाने ही गांधीजीको पहनाया था न ? और राजकोट, जहाँ अुन्होंने अपने प्राणोंकी बाज़ी लगाअी थी, वह भी तो अुन्हें अपना ही समझता है।

अिन सारी बातोंको सुनकर पहाड़ोंका राजा हिमालय होठोंमें मुसकराता है। वह कहता है—‘ कौन अिन लोगोंके मुँह लगे ? अिन बेचारोंको क्या पता कि गांधीजी मन-ही-मन किसके लिअे तड़पा करते हैं ? ’

पर धन्य है, अुस छोटे-से सेवाग्रामको ! बीच हिन्दुस्तानमें बसे हुअे अिस नन्हें-से गाँवका कोअी नाम तक नहीं जानता था। औरोंकी तरह न वह अपना दावा लेकर आगे बढ़ा, न झगड़ा, न फ़रियाद की। फिर भी बड़ा भागवान है वह, कि गांधीजी आज अुसीको अपनाये हुअे हैं। अिसीलिअे न साबरमतीका सन्त अब सेवाग्रामका सन्त कहलाता है ?

२

जाति

वैसे गांधीजी मोढ़ बनियोंकी जातमें पैदा हुअे हैं। पर वे .खुद अपनेको क्या कहते हैं ?

अेक बार सरकारने अुनपर राजद्रोहका मामला चलाया। अहमदाबादकी अदालतमें मुक़दमेकी सुनवाअी हो रही थी। अदालतमें न्यायाधीश (मजिस्ट्रेट) अपराधीका नाम-पता पूछता ही है। गांधीजीसे भी पूछा गया :

'आपका नाम क्या है ?'

'मोहनदास करमचंद गांधी।'

'आप रहते कहाँ हैं ?'

'सत्याग्रह आश्रम, साबरमती।'

'आपका पेशा क्या है ?'

'किसानी और जुलाहागिरी।'

यह आख़िरी जवाब सुनकर न्यायाधीश सन्न रह गये! जनता दंग रह गअी!

३

पुतलीबाअी

गांधीजीकी माँका नाम पुतलीबाअी था। वे बड़ी भावुक थीं। बिना पूजापाठ किये कभी खाना न खाती थीं और रोज़ देवदर्शनके लिअे मन्दिरमें जाती थीं।

महीनेमें दो बार बिलानाग़ा अेकादशीका व्रत रखती थीं, और दिनमें अेक बार खाकर रह जाना तो उनके लिअे बायें हाथका खेल था।

बारिशके चार महीनोंमें, चातुर्मासमें, वे तरह-तरहके व्रत-अुपवास किया करती थीं — कभी चान्द्रायण, कभी अेकाशन, कभी कुछ, कभी कुछ।

किसी साल चौमासेमें वे कुछ कड़े व्रत भी किया करती थीं। अेक व्रत सूरजवंशीका था, यानी जिस दिन सूरज दिखाअी दे जाय, अुसी दिन खाना, वरना अुपासे रह जाना।

अैसी भोली और भावुक माँपर बच्चोंका बेहद प्यार हो, तो अुसमें अचरज ही क्या? जिस दिन माँको भूखों रहना पड़ता, बच्चे दिन-दिन भर बादलोंकी ओर ही देखा करते, और ज्योंही सूरज दीखता, दौड़कर माँके पास ख़बर देने पहुँच जाते:

'माँ! माँ! दौड़ो, दौड़ो, सूरज निकला।' लेकिन माँ पहुँचें, पहुँचें, अितनेमें तो सूरज फिर बादलोंमें छिप जाता और यों माँको कअी बार भूखों रह जाना पड़ता।

मगर माँ बातकी अैसी तो पक्की थीं, कि दुनिया चाहे अुलट जाये, ख़ुद बीमार पड़ जायँ, अरे, जान चली जाये, तो भी व्रत तो व्रत ही रहता था!

अैसी टेकवाली, अैसी भली, अैसी भोली और भावुक माँ जिनकी थीं, अुन गांधीजीका फिर क्या पूछना था?

४

कस्तूरबा

शायद तुममेंसे कअियोंने गांधीजीको देखा होगा, पर कस्तूरबाको तो शायद बिरलों ही ने देखा हो! वे गांधीजी-जैसे महापुरुषकी पत्नी हैं। तुम सोचते होगे कि वे महारानी बनकर रहती होंगी। माताजीके नाते लोगोंसे अपनेको पुजवाती होंगी। अुनका ठाट-बाट ही कुछ निराला रहता होगा! आश्रममें रहते समय वे गांधीजीकी बराबरीसे बैठतीं और लोगोंको दर्शन दिया करती होंगी! पर दरअसल अैसी कोअी बात नहीं। 'बा'का तो ढंग ही कुछ और है। वे कभी आगे आती ही नहीं। आश्रममें जाकर देखो, तो अुन्हें कहीं न कहीं, किसी काममें मशग़ूल पाओ! कभी रसोअीघरमें रोटी बेलती दिखाअी पड़ेंगी, कभी गांधीजीका खाना तैयार करती मिलेंगी, कभी किसी बीमारकी सेवामें, तीमारदारीमें, लगी होंगी। हाँ, जब कभी गांधीजी बीमार होते हैं, तो अुनका सर दबानेका काम कस्तूरबा ही करती हैं, और अैसे समय वे अुनके पास ज़रूर दिखाअी पड़ जाती हैं।

कस्तूरबाकी यह आदत नहीं कि वे सभाओंमें या जलसोंमें गांधीजी के साथ बराबरीसे जायँ, और मंचपर खड़ी होकर भाषण करने लगें। अुनका तो तरीक़ा ही कुछ और है। अक्सर तो वे जाती ही नहीं, मुक़ामपर ही रहती हैं, पर जब जाती हैं, तो चुपचाप पीछे-पीछे जाती हैं, और सभाके किसी कोनेमें, बहनोंके बीच, चुपके-से बैठ जाती हैं। किसीको खयाल तक नहीं होता कि ये कस्तूरबा हैं: गांधीजीकी पत्नी हैं!

कस्तूरबाको बड़ी बनकर घूमनेका ज़रा भी शौक़ नहीं। बड़प्पनके दिखावेसे अुन्हें कोअी मतलब नहीं। वे तो अेक ही बात जानती हैं — गांधीजीके पीछे-पीछे चलना और अुनकी सेवा करना! सीताने रामके लिअे राजपरिवारका सुख छोड़ा, और जंगलकी राह पकड़ी थी। कस्तूरबा भी अिसी तरह शाही सुखोंका त्याग करके गांधीजीके साथ आश्रमवासिनी बनी हैं।

अिस ज़मानेमें तुम्हें कहीं सतीके दर्शन करने हों, तो कस्तूरबाके दर्शन कर लो।

५

परीक्षा

गांधीजी अंग्रेज़ीके दूसरे या तीसरे दर्जेमें पढ़ते थे।

अेक बार अुनके स्कूलमें कोअी अिन्स्पेक्टर अिम्तहान लेने आये और अुन्होंने गांधीजीकी कक्षाके सभी छात्रोंको अंग्रेज़ीके पाँच शब्द लिखाये।

वर्ग-शिक्षक पासमें खड़े थे। वे घूर-घूरकर तिरछी निगाहसे देख रहे थे कि कौन क्या लिख रहा है। अुनकी छाती धड़क रही थी। वे डरते थे कि कहीं लड़कोंने ग़लत लिख दिया तो डाँट अुनपर पड़ेगी। अिन्स्पेक्टर कहेंगे: 'मास्टर पढ़ाना नहीं जानता।'

मास्टरने देखा कि मोहनदासने 'केट्ल' (kettle) शब्दके हिज्जे ग़लत लिखे हैं। पर बेचारे क्या करते? वे घूमते घामते मोहनदासके पास गये, और अपने बूटकी ठोकरसे अुनका पैर दबाकर अिशारा करने

लगे कि वह पासवाले लड़केकी पट्टी देख लें। लेकिन मोहनदास तो अिन बातोंसे कोसों दूर रहनेवाले थे। अुन्हें ख़याल तक न हुआ कि मास्टर चोरीका अिशारा कर रहे हैं। फिर वह कैसे समझ लेते कि शिक्षक दूसरेका देखकर सही लिखनेको सुझा रहे हैं?

दूसरे दिन शिक्षकने मोहनदाससे कहा — 'निरे बुद्धू हो जी तुम! कितने अिशारे किये, मगर तुम्हारी समझमें कुछ ख़ाक भी न आया।'

गांधीजीने शिक्षकसे तो कुछ नहीं कहा, मगर अपने मनमें यह ज़रूर समझ लिया कि शिक्षककी बात मानने लायक़ न थी; वह ग़लत थी और पापकी जड़ थी।

६

सत्य

बचपन ही से गांधीजीको सत्य या सचाअी बहुत प्यारी रही है।

अुन्होंने अपनी 'आत्मकथा' में लिखा है कि कैसे वे अपने बचपनमें कुछ दिनोंके लिअे बुरी सोहबतमें पड़ गये थे और फिर कैसे अुससे छूटे।

बचपनमें अपने साथी-संगियोंके साथ गांधीजीको भी बाज़ारका खाने और बीड़ी वग़ैरा पीनेका शौक़ लग गया था। अैसे कामोंके लिअे माँ-बापसे तो पैसे माँगे नहीं जा सकते। अिसलिअे अिन लोगोंने घरके नौकरोंकी जेबसे पैसे चुराना सीख लिया।

मोहनदासको ये काम दिलसे पसन्द नहीं थे; मगर क्या करते? दोस्तोंको खाते-पीते देखकर मन मचल पड़ता था, और दिल बेक़ाबू हो जाता था।

यों होते-होते खाने-पीनेका ख़र्च, और ख़र्चके साथ क़र्ज़ बढ़ने लगा। दूकानदारोंके तक़ाज़े शुरू हो गये। अब क्या हो? ख़याल हुआ, नहीं, डर-सा लगने लगा, कि कहीं दूकानदार दस जनोंके सामने पैसे न माँग बैठे! कहीं घर जाकर पिताजीसे न कह बैठे!

नौकरोंकी जेबसे तो पैसे दो पैसे ही मिल पाते थे; और क़र्ज़ बेहद बढ़ गया था। अब क्या हो?

दोस्तोंकी टोली परेशान हो अुठी। अिस टोलीमें मोहनदासके बड़े भाअी भी शामिल थे। अिस आफ़तसे बचनेकी अुन्हें अेक ही तरकीब सूझी, और वह चोरीकी तरकीब थी। अुन्होंने कहा — "मेरे हाथमें सोनेका यह कड़ा है; अिसमें से अेक तोला सोना कटवाकर क़र्ज़ चुकाया जा सकता है, और बात भी छिपाअी जा सकती है।"

मोहनदासको यह अटपटा तो लगा; लेकिन विरोध करनेकी अुनकी हिम्मत न हुअी। अुन्होंने कड़ा कटने दिया।

अिस तरह क़र्ज़ तो अदा हो गया, पर जिसे सचाअी प्यारी थी, वह तो मन-ही-मन बेचैन हो अुठा!

आत्मा अुसकी पुकार अुठी — 'अरेरे, मैं अिस चोरीमें क्यों शामिल हुआ? मैंने छिपकर खाया, छिपकर बीड़ी पी! भाड़में जाय यह खाना, और धूलमें मिले यह धुआँ अुड़ाना!'

फिर ख़याल आया — 'हाय-हाय! कैसी ग़लती हुअी! ख़ुद ठगाया और पिताजीको भी ठगा।'

मोहनदास अुदास रहने लगे — अुन्हें न खाना अच्छा लगता था, न पीना। जो ग़लती हो गअी थी, अुसका ख़याल दिनरात दिलको कचोटा करता था।

आखिर अुन्होंने तय कर लिया — ‘ पिताजीके सामने जाकर अपनी ग़लती क़बूल करूँगा। वे नाराज़ होंगे, नाराज़ी सह लूँगा। मारेंगे, मार खा लूँगा।’

पिताजीके सामने जाकर मुँहसे कुछ कहनेकी हिम्मत कैसे हो? मोहनदासने अेक चिट्ठी लिखी। चिट्ठीमें अपनी ग़लतियोंका पूरा ब्योरा लिखा; ग़लतियाँ क़बूल कीं और पिताजीसे माफ़ी माँगी। आँसू भरी आँखों और काँपते हाथों चिट्ठी पिताजीको दी। पढ़ते ही अुनकी छाती भर आअी। आँखें सजल हो अुठीं। अुन्होंने क़ुसूर माफ़ कर दिया, और अपने सत्यवादी बेटेको गले लगा लिया!

७

प्रह्लाद और हरिश्चन्द्र

अिन दोनों सत्याग्रहियोंकी कथापर गांधीजी बचपन ही से मुग्ध हैं। जो ख़ुद सचाअीसे प्यार करता है, अुसे सच बोलनेवालोंकी, सत्यवादियोंकी, कथायें क्यों न प्यारी लगेंगी?

राजा हरिश्चन्द्रने सत्यके लिअे कितनी तकलीफ़ें अुठाअीं? राज खोया, पाट खोया, जंगलोंमें मारे-मारे फिरे, स्त्री बेची, पुत्र बेचा और फिर ख़ुद भी चाण्डालके हाथ बिक गये। रोंगटे खड़े करनेवाली मुसीबतें सहीं, लेकिन सचाअी न छोड़ी। कहते हैं, गांधीजीने बचपनमें ‘ हरिश्चन्द्र ’का अेक नाटक देखा था। बस, जिस दिन वह नाटक देखा, अुस दिनसे वे हरिश्चन्द्रके ही सपने देखने लगे। हरिश्चन्द्रकी याद आते ही वे अक्सर रो पड़ते थे। अुन्होंने लिखा है कि आज भी

वे अुस नाटकको पढ़ें, तो अुनकी आँखें आँसुओंसे तर हुअे बिना न रहें। वे कहा करते हैं कि हरिश्चन्द्रकी तरह दुःख सहने और तिसपर भी सचाअीसे तिलमात्र न हटनेका नाम ही सत्य है।

गांधीजीको हरिश्चन्द्रसे भी बढ़कर प्रह्लादकी कथा प्यारी है। हरिश्चन्द्र तो राजा थे, अनुभवी थे और ज्ञानी थे।

लेकिन प्रह्लाद ?

वह तो अेक नन्हा-सा सुकुमार बालक था। राक्षसके घर पैदा होकर भी अुसने भगवानका नाम लेनेकी हिम्मत दिखाअी थी। पिताने अुसे पहाड़परसे फिंकवाया, पर अुसने रामनाम न छोड़ा। समुद्रमें डुबोया, तो भी रामनाम न छोड़ा। जलते हुअे खम्भेसे लिपटनेको कहा गया, वह निधड़क लिपट गया, पर अुसने रामनाम न छोड़ा।

गांधीजी प्रह्लादके अिस सत्याग्रहको हमेशा अपने सामने रखते हैं। और अुठते-बैठते अिसीका अुदाहरण दिया करते हैं — 'प्रह्लादके समान कमसिन बालक भी सत्याग्रहकी ताक़त दिखा सकता है। सत्याग्रहके लिअे न पहलवानोंकी-सी ताक़त जरूरी है, न राजाके-से सैन्यबलकी आवश्यकता है।'

८

वैष्णव

अगर कोअी गांधीजीसे पूछे : 'आपका धर्म क्या है ?' तो वे कहेंगे : 'वैष्णव।'

जो अुन्हें नहीं जानते, अुनको यह सुनकर अचरज हो सकता है। क्योंकि गांधीजी न कभी मन्दिरमें जाते हैं, न घरमें देवताकी पूजा करते हैं, न भगवानको भोग लगाते हैं, और न ख़ुद गलेमें कण्ठी या माला पहनते हैं। तिसपर जात-पाँतका कोअी ख़याल नहीं रखते — हर किसीके साथ बैठकर खा लेते हैं।

भला, अैसे आदमीको कोअी वैष्णव कह सकता है ?

मगर गांधीजीसे पूछो, तो वे कहेंगे : 'भअी, मैं तो अपनेको वैष्णव ही मानता हूँ। नरसिंह मेहताने वैष्णवके जो लक्षण बताये हैं, अुनको मैं जानता हूँ और वैसा वैष्णव बननेकी कोशिश कर रहा हूँ। मेहताजी कहते हैं :

वैष्णव जन तो तेने कहीअे
जे पीड़ पराअी जाणे रे,
परदु:खे अुपकार करे तोये,
मन अभिमान न आणे रे। वैष्णव०

सकळ लोकमां सहुने वन्दे,
निन्दा न करे केनी रे;
वाच काछ मन निश्चळ राखे,
धन धन जननी तेनी रे। वैष्णव०

समदृष्टि ने तृष्णा त्यागी,
　　　　पर स्त्री जेने मात रे;
जिह्वा थकी असत्य न बोले,
　　　　परधन नव झाले हाथ रे। वैष्णव०
मोह माया व्यापे नहि जेने,
　　　　दृढ़ वैराग्य जेना मनमां रे;
रामनामशुं ताळी रे लागी,
　　　　सकळ तीरथ तेना तनमां रे। वैष्णव०
वणलोभी ने कपटरहित छे,
　　　　काम क्रोध निवार्या रे;
भणे नरसैंयो, तेनुं दरशन करतां,
　　　　कुळ अेकोतेर तार्यां रे। वैष्णव०

वैष्णव वह है, जो दूसरोंकी तकलीफ़को समझता है; दुःखमें दूसरोंकी मदद करता है; पर मनमें ज़रा भी ग़रूर नहीं आने देता।

वैष्णव वह है, जो दुनियामें सबके सामने झुकता है, किसीकी निन्दा नहीं करता, और ख़ुद मन, वचन और शरीरसे निश्चल रहता है।

वैष्णव वह है, जो सबको बराबरीकी निगाहसे देखता है, जो तृष्णा छोड़ चुका है, जो पराअी औरतोंको माँ समझता है, ज़बानसे कभी झूठ नहीं बोलता, और पराये धनको कभी हाथ नहीं लगाता।

वैष्णव वह है, जिस पर मोह और मायाका कोअी असर नहीं होता, जिसके मनमें पक्का वैराग्य जमा हुआ है, और जिसे रामनामकी लौ लग चुकी है।

वैष्णव वह है, जो छल-कपटसे दूर रहता है, लालचको पास नहीं फटकने देता, और काम-क्रोधपर सवारी कसे रहता है।

नरसिंह मेहता कहते हैं, कि जो अैसा वैष्णव है, अुसकी माताको सौ-सौ बार धन्यवाद है; अुसके शरीरमें सभी तीर्थ समाये हुअे हैं; और अुसका दर्शन करनेसे मनुष्यकी अिकहत्तर पीढ़ियोंका अुद्धार हो जाता है।

९
चर्खा

'हे भगवन्! अगर मौत ही देनी हो, तो अैसी देना कि अेक हाथमें चर्खेका हत्था हो, दूसरेमें पूनी रह गअी हो, और आँखें मुँद जायँ।'

भला भगवान्से अैसी प्रार्थना कौन करता होगा?

गांधीजी ही तो; और कौन कर सकता है?

चर्खेसे अुन्हें बेहद प्यार है।

रोज़ चर्खेपर सूत कातना अुनका अेक अटल नियम है; व्रत है। कैसा भी काम क्यों न हो, गांधीजी चर्खा कातेंगे और ज़रूर कातेंगे।

सफरमें भी वे चर्खेको हमेशा अपने साथ रखते हैं, और .फुरसत निकाल कर ज़रूर कात लेते हैं। बीमारी और कमज़ोरीमें भी वे कातना नहीं छोड़ते! अुनका व्रत ही अैसा है।

जब जेल जाते हैं, तो वहाँ भी वे अपने प्राणोंसे प्यारे चर्खेको ज़रूर साथ ले जाते हैं।

यरवड़ा जेलमें गांधीजीने दो चक्रोंवाले चर्खेपर .खूब काता और कातते-कातते अुसमें कअी तरहके सुधार भी किये। यही सुधरा हुआ, सुन्दर, नाज़ुक, नन्हा चर्खा आज 'यरवड़ा चक्र'के नामसे मशहूर है।

चर्खेमें वह ताक़त है कि अुससे देशके करोड़ों नंगे अपना तन ढँक सकते हैं, और भूखे भरपेट भोजन पा सकते हैं। चर्खेके सूतमें देशको स्वराज्य दिलानेकी शक्ति है। अिसीसे गांधीजी अुसे कामधेनु कहते हैं, और अुसकी हलकी, मीठी गूँजमें मीठे-से-मीठे संगीतका अनुभव करते हैं।

देशमें करोड़ों अैसे ग़रीब हैं, जो दिन-रात पसीना बहानेपर भी भरपेट खा नहीं पाते। अुनके अिस दुःखका अनुभव हमें कैसे हो सकता है? तभी न, जब हम भी अुनकी तरह कुछ मेहनत करें, कुछ पसीना बहायें! अिसीलिअे गांधीजी कहते हैं कि जिन्हें देशके ग़रीबोंका दुःख दूर करना है, और अुनके दुःखमें शरीक होना है, अुन्हें हर रोज़ कमसे कम आध घण्टा सूत ज़रूर कातना चाहिअे।

हिन्दुस्तानके तिरंगे झण्डेके बीचोंबीच चर्खा छपानेका ख़याल भी गांधीजीका ही है। झण्डेपर छपा हुआ वह चर्खा दुनियाके बीच यह अैलान करता है कि जो स्वराज्य करोड़ों गरीबोंका है, वही सच्चा स्वराज्य है।

१०

गांधीजीकी रहन-सहन

क्या तुम जानते हो, गांधीजीकी रहन-सहन कैसी है? जानना चाहोगे क्या कि वे किस तरह रहते हैं?

तो सुनो :

वे रोज़ सबेरे चार बजे नियमसे अुठते हैं। दतौन करके हाथ-मुँह धोते और फिर प्रार्थनामें शामिल होते हैं। प्रार्थनाके बाद वे कभी थोड़ा आराम करते, कभी लिखते-पढ़ते और फिर नीबूका रस और शहद मिला हुआ गरम पानी पीते हैं। अिसके बाद वे कसरतके तौर पर रोज़ नियमसे घूमने जाते हैं।

लौटते समय आश्रमके बीमार भाअी-बहनोंको देखते हुअे, अुनका कुशल-मंगल पूछते हुअे, वापस अपनी जगहपर आते हैं।

फिर वे रसोअीघरमें जाकर अपने हिस्सेका काम करते हैं। अिसी समय वे थोड़ा नाश्ता भी कर लेते हैं।

अिसके बाद या तो आनेवाले मुलाक़ातियोंसे बातचीत करते हैं, या आये हुअे पत्रोंको पढ़ते और अुनके जवाब लिखते हैं, या 'नवजीवन' और 'यंग अिंडिया'के लिअे लेख लिखते हैं।

भोजनके समय परोसनेका काम वे बड़े चावसे करते हैं।

दोपहरको वे नियमसे चर्खा चलाते हैं। दिनमें कमसे कम अेक घण्टा, और कममें कम १६० तार कातनेका अुनका नियम है।

शामको सूरज डूबनेसे पहले ही वे भोजन कर लेते हैं, और भोजनके बाद थोड़ा घूम लेते हैं।

शामको सात बजे जब प्रार्थनाकी घण्टी बजती है, वे घूमकर वापस आ जाते हैं।

अिसके सिवा, गांधीजी अपने समय-पत्रकके अनुसार कभी आश्रम की बहनोंको, कभी विद्यार्थियोंको और कभी बाल-मन्दिरके बालकोंको कुछ पढ़ाते-लिखाते भी हैं।

अिस तरह सारा दिन काम करके रातके साढ़े नौ बजे वे सो जाते हैं। लेकिन कभी-कभी काम अितना ज्यादा हो जाता है कि रातमें देर तक जागकर अुसे पूरा करना पड़ता है। यों, देरसे सोनेपर भी सुबह चार बजे तो वे अुठते ही हैं। अिसमें कोअी फ़र्क़ नहीं पड़ता।

११
सत्याग्रहीकी दिनचर्या

अूपर तुम देख चुके कि अेक सत्याग्रहीकी रहन-सहन और अुसकी दिनचर्या कैसी होती है।

अुसका अेक भी मिनट निकम्मा नहीं जाता। अपना अेक क्षण भी वह आलस्यमें नहीं बिताता।

गांधीजीकी दिनचर्याकी दूसरी ख़ूबी यह है कि वे अपने रोज़के कामका समय-पत्रक हर रोज़ बनाते हैं, और अुसके मुताबिक़ अेक-अेक मिनटकी पाबन्दी रखते हैं। जिस कामके लिअे जो समय तय कर लेते हैं, अुसे ठीक अुसी समय शुरू करते हैं, और जितना समय अुसे देना होता है, अुतना ही देते हैं। अपना सारा दिन वे घड़ीके काँटेपर, घड़ी की-सी नियमितताके साथ बिताते हैं। फिर,

दिनभर जितना काम वे करते हैं, अुसका रोज़नामचा भी बराबर लिखते हैं, और रातमें सोनेसे पहले अुसे अेक बार देखकर और पूरा करके सोते हैं।

१२
मौन-वार

गांधीजी हर सोमवारको मौन रखते हैं, यानी अुस दिन वे किसीसे बोलते या बातचीत नहीं करते। कैसा भी ज़रूरी काम क्यों न आ पड़े, वे अपना मौन नहीं तोड़ते। ज़रूरत पड़नेपर जो कहना होता है, काग़ज़पर लिखकर कह देते हैं, लेकिन बोलते तो हरगिज़ नहीं।

हफ़्तेमें अेक दिन अिस तरह मौन रहनेसे अुन्हें बड़ी शान्ति मिलती है। अुस दिन न किसीसे बातचीत करनी पड़ती है, न सभाओंमें भाषण देने पड़ते हैं, और न कहीं घूमने-भटकने जाना पड़ता है। अिस तरह अुस दिन हलचल या चहल-पहलका सारा काम बन्द रहता है।

मौन-दिनकी अिस शान्तिमें अुनको काफ़ी आराम मिल जाता है। लेकिन जानते हो, अिस आरामका अुपयोग वे किस तरह करते हैं?

आरामका वह दिन गांधीजी सोकर तो बिता नहीं सकते। हफ़्तेके अख़ीरमें कामका जो ढेरों बोझ बढ़ जाता है, मौन-दिनकी शान्तिमें अुसीको अुतारकर वे हलके हो जाते हैं।

यों, मौन-पूर्वक, चुपचाप, काम करनेमें जो आनन्द आता है, वह अनुभव करनेकी चीज़ है।

१३

गांधीजीकी विशेषतायें

गांधीजीकी कुछ विशेषतायें, अुनकी कुछ ख़ासियतें, जानने लायक़ हैं।

वे कभी धीमी या सुस्त चालसे नहीं चलते। अुनकी चालमें हमेशा फुर्ती रहती है।

वे कभी झुककर या सिमटकर नहीं बैठते। हमेशा तनकर और स्थिर आसनसे बैठते हैं।

वे कभी मेज़का सहारा लेकर नहीं लिखते। तनकर बैठते और घुटनोंपर काग़ज़ रखकर ही लिखते हैं।

वे जो कुछ लिखते हैं, अुसे दुबारा पढ़कर ही आगे जाने देते हैं। अेक छोटा-सा कार्ड लिखेंगे, तो अुसे भी दुबारा पढ़ेंगे, जो कुछ घटाना-बढ़ाना होगा, घटायेंगे-बढ़ायेंगे; और तभी अुसे डाकख़ाने जाने देंगे।

अुन्हें सफ़ाअी और सुघड़ता बहुत प्यारी है। यही वजह है कि वे अपने कपड़े-लत्ते और दूसरी चीज़ोंको हमेशा बहुत ही साफ़ और सजावटके साथ रखते हैं।

गांधीजी हर अेक कामको बड़ी ख़ूबी और बारीकीके साथ करते हैं।

वे कभी अपना फोटू खिंचवाने नहीं बैठते।

वे काममें कितने ही क्यों न मशग़ूल हों, फिर भी कोअी बाल-गोपाल, कोअी राजा-बेटा, अुनके पास जा पहुँचता है, तो वे अुससे खेले बिना रह नहीं सकते।

बातचीत करते समय गांधीजी अक्सर ख़ूब खिलखिलाकर हँसते हैं। हँसते क्या हैं, मानों फूल बिखेरते हैं।

१४

आश्रम — १

अहमदाबाद गुजरातका राजनगर है। अिसी राजनगरके नजदीक साबरमतीके किनारे गांधीजीका पुराना आश्रम है।

अेक जमाना था, जब अिस आश्रममें गांधीजी रहते थे, कस्तूरबा रहती थीं, और दूसरे बहुतेरे भाअी और बहन, बच्चे और बच्चियाँ भी रहती थीं।

आश्रममें गुजराती थे, महाराष्ट्री थे, पंजाबी और सिन्धी थे, मद्रासी और नेपाली भी थे: हिन्दुस्तानके सभी सूबोंके लोग वहाँ रहते थे। यूरोपके गोरे व चीन और जापानके पीले लोग भी रहते थे।

वे सभी खादी पहनते और नियमसे कातते थे।

वे सुबह चार बजे अुठकर प्रार्थनामें आते और फिर शामको सात बजेकी प्रार्थनामें भी शरीक होते। प्रार्थनामें वे श्लोक-पाठ करते, भजन गाते आर रामधुनकी रट लगाते। वे गीताका पारायण करते; और अक्सर प्रार्थनाके बाद गांधीजीका प्रवचन सुनते।

सभी आश्रमवासी अेक साथ, अेक जगह, बैठकर खाते। भोजनमें मिर्च, मसाला, हींग आदिका बिलकुल अुपयोग न करते। सादा और सुस्वादु भोजन आश्रमकी विशेषता रहती। सुबह-शाम नियत समयपर सब खाने बैठते और शान्तिमंत्र बोलकर खाना शुरू करते। अैसे समय कभी बार गांधीजी ख़ुद सबको परोसकर खिलाते।

आश्रममें हरिजन भी सबके साथ ही रहते और साथ ही काम करके आश्रमके भोजनालयमें भोजन करते।

आश्रममें सफ़ाओीका बहुत खयाल रक्खा जाता। जहाँ-तहाँ थूकना, कागज़ फेंकना, जूठन गिराना या पेशाब करना मना था।

आश्रमवासी जहाँ-तहाँ पाखाना फिरकर आसपासके जंगलको गन्दा नहीं करते। वे सुन्दर, हवादार और अुजेले कमरोंमें पाखानेका प्रबन्ध करते हैं, और पाखाना फिरनेके बाद मैलेको साफ़ मिट्टीसे ढँक देते हैं। आश्रमवासी अपने पाखानोंकी सफ़ाअी ख़ुद ही करते हैं। अिससे जो खाद मिलता है, अुसके कारण आश्रमके बागीचे ख़ूब पनपते और लहलहाते रहते हैं।

१५
आश्रम — २

गांधीजीके साबरमतीवाले आश्रममें अेक छात्रालय था। अिस छात्रालयमें देश-विदेशके विद्यार्थी आकर रहते थे। कोअी कातना सीखता था, कोअी पींजना सीखता था और कोअी करघेपर हाथसे खादी बुनना सीखता था। कुछ विद्यार्थी कारखानेमें बढ़अीगिरीका काम सीखते और चर्खे वगैरा बनाते थे।

आश्रममें कअी लड़के और कअी लड़कियाँ रहती थीं। वे सभी अुद्योग सीखते और साथ-साथ पढ़ते-लिखते भी थे।

आश्रममें बड़ी बहनोंके लिअे अेक स्त्री-निवास था। वे रोज़ अपने निवासमें अिकट्ठा होतीं और प्रार्थना करतीं, कुछ देर लिखती-पढ़तीं और कातने-पींजनेका काम भी करतीं। आश्रमका संयुक्त भोजनालय, जहाँ सभी आश्रमवासी मिलकर खाते थे, ये बहनें ही चलाती थीं।

वे बारी-बारीसे रसोअीघर में काम करतीं, और कोठारका अनाज साफ़ करनेमें मदद पहुँचातीं।

आश्रममें नन्हें-नन्हें बच्चोंका अेक बाल-मन्दिर भी चलता; लेकिन अुसके लिअे अलगसे कोअी शिक्षक न रक्खा जाता। आश्रमवासिनी बहनें ही अुस बाल-मन्दिरका काम देखतीं।

आश्रममें अेक सुन्दर गोशाला थी। गोशालामें बहुतेरी मोटी-ताज़ी गायें थीं। आश्रममें हमेशा गायके दूधका ही अुपयोग होता।

आश्रमका अपना अेक छोटा-सा चर्मालय भी था। अुसमें अपनी मौत मरे मवेशियोंका चमड़ा कमाया जाता, और अुसके चप्पल वग़ैरा बनाये जाते। जो ढोर क़त्ल किये जाते हैं, अुनके चमड़ेको काममें लाना, अुनके क़त्लमें मदद पहुँचाना है। अिसलिअे आश्रमवासी अिस अहिंसक चमड़ेके जूते और चप्पल वग़ैरा ही काममें लाते हैं।

आश्रमकी अपनी थोड़ी खेती-ब़ाड़ी भी है। अुसमें कुछ तो फलोंके पेड़ लगाये गये हैं। कुछ साग-सब्ज़ी होती है, और खेतोंमें कुछ ज़ुवार व कपास वग़ैरा भी बोया जाता है।

अिन सब कामोंमें आश्रमके भाअी, बहन और बच्चे सभी पूरा-पूरा भाग लेते। वे बारी-बारीसे कभी रसोअीघरमें काम करते, कभी गोशालामें गोबर अुठाने जाते, कभी पाख़ानोंकी सफ़ाअी करते, और कभी खेती-ब़ाड़ीके काममें सहायक होते।

सुबहसे शाम तक गांधीजीका आश्रम मधुमक्खीके छत्तेकी तरह अुद्योगसे गूँजा करता। गांधीजीने अिसीलिअे अुसका नाम ‘अुद्योग-मन्दिर’ रख दिया, जो बहुत ही ठीक हुआ।

१६

नौकर

आम तौरपर लोग आजकल पानी भरने, बरतन मलने, झाड़ने-बुहारने, पीसने, रसोअी बनाने, कपड़े धोने, कातने और पाख़ाना-सफ़ाअी वग़ैरा करनेसे जी चुराते हैं, क्योंकि अुनके ख़यालमें ये सारे काम हलके हैं। फ़ुरसत रहते हुअे भी वे अिन कामोंको हाथ नहीं लगाते, क्योंकि वे मानते हैं कि ये सब हलके लोगोंके करने लायक़ काम हैं। चुनाँचे वे अिनके लिअे नौकर रखते हैं, और अुन नौकरोंको हलका समझकर अुनके साथ ख़ुद हलकेपनका सलूक करते हैं।

गांधीजी किसी कामको हलका नहीं समझते। आश्रम शुरू करनेसे पहले भी अुनके ख़याल अिसी तरहके थे। यह नहीं कि अुन्होंने कभी अपने घरमें नौकर रक्खे ही न हों; पर नौकरोंके साथ नौकरका-सा सलूक अुन्होंने कभी नहीं किया।

बचपनमें, जब वे बहुत छोटे थे, अुनके घर रम्भा नामकी अेक नौकरानी काम करती थी। गांधीजी आज भी अुसे सगी माँकी तरह याद करते हैं। बचपनमें अिसी रम्भाने गांधीजीको सिखाया था कि जब डर लगा करे, रामका नाम ले लिया करो; डर भाग खड़ा होगा। गांधीजी अुसकी सीखको अभी तक भूले नहीं हैं।

बैरिस्टरी पास करनेके बाद गांधीजी कुछ दिन बम्बअीमें अपने कुनबेके साथ रहे थे। अुस वक़्त अुन्होंने अपने यहाँ अेक ब्राह्मण रसोअियेको नौकर रक्खा था। ख़ुद विलायतसे लौटकर आये थे।

बड़ी शानसे अंग्रेज़ी ठाट-बाटमें रहते थे। मगर नौकरको नौकर नहीं समझते थे। आधी रसोअी महाराज बनाता, आधी .खुद बनाते, साथमें रसोअियेको कुछ सिखाते भी जाते और अुसके संग बराबरीसे बैठकर खाना खाते। नौकरके नाते अुससे किसी तरहका भेदभाव न रखते।

दक्षिण अफ्रीकामें गांधीजी काफ़ी कमाते थे। वहाँ अुनका परिवार भी बहुत बड़ा था। फिर भी कपड़े धोने, और पाख़ाना सफ़ाअी करनेका काम गांधीजी और कस्तूरबा अपने हाथों करते थे। घरमें महरों और मुहर्रिरोंकी कमी न थी; लेकिन वे सब घरके आदमी ही समझे जाते थे और अुनके साथ वैसा ही सलूक भी होता था।

आश्रमवासी बननेके बाद तो नौकर न रखने और सारा काम ख़ुद करनेका नियम ही बन गया। जिनका सारा जीवन ही सेवाके लिअे है, अुनके लिअे नौकर क्या और मालिक क्या ?

१७

अिस पार गंगा : अुस पार जमुना

गोकुलके बारेमें कहा जाता है कि अुसके अिस पार गंगा और अुस पार जमुना है, और दोनोंके बीचमें गोकुलकी अपनी सुन्दर बस्ती है।

गांधीजीके आश्रमका भी यही हाल है। अेक तरफ़ साबरमतीका जेलख़ाना है, और दूसरी तरफ़ दूधेश्वरका मन्दिर और मसान है।

गांधीजीने आश्रमके लिअे जो जगह चुनी, वह सत्याग्रहियोंकी शानको बढ़ानेवाली थी। अुन्हें न तो जेलका डर रहता है, न मौतका खौफ़! दोनों चीजें अुन्हें यकसाँ प्यारी हैं, और दोनों अुनकी पड़ौसिन हैं।'

जेलकी तरफ़ अिशारा करके गांधीजी आश्रमवालोंसे अक्सर कहते: 'किसी दिन हमें भी वहाँ रहने जाना है। अिसलिअे जैसी कड़ी जिन्दगी जेलमें क़ैदियोंको बितानी पड़ती है, वैसी यहाँ बिताना सीख लो।'

दूधेश्वरको दिखाकर वे कहते: 'जहाँ हम रोज़ हवाख़ोरीको जाते हैं, वहाँ अेक दिन हमेशाके लिअे जानेमें डर कैसा? हमारा फ़र्ज़ है कि हम देशके लिअे मरनेको हमेशा तैयार रहें।'

भला, अैसी जगहमें रहनेकी हिम्मत कौन कर सकता है? वही न, जिसे देशसेवाका सबक़ सीखना हो, गांधीजीकी सोबतमें रहना पसन्द हो, और मेहनत-मशक्क़तकी सीधी-सच्ची जिन्दगी बितानेकी लौ लगी हो।

१८

ज़िन्दा लाठियाँ

जब गांधीजी हवाख़ोरीको निकलते हैं, तो छोटे-बड़े कअी बच्चे भी अुनके साथ हो लेते हैं, और गांधीजीके साथ गपशप लड़ानेका मज़ा लूटते हैं।

मगर गांधीजीके साथ घूमने जानेवालोंको दरअसल जो मज़ा मिलता है, वह तो कुछ और ही है! चलते समय गांधीजीको लाठीका सहारा तो चाहिये न? बस, ये बच्चे अुनके अगल-बगल खड़े हो जाते हैं, और गांधीजीके दोनों हाथोंको अपने कंधोंपर ले लेते हैं।

यों दोनों तरफ़ दो ज़िन्दा लाठियाँ चलने लगती हैं, और बीचमें गांधीजी बातचीत करते हुअे हवा खाते चलते हैं।

गांधीजी अिन बच्चोंको अपनी ज़िन्दा लाठियाँ कहते हैं, और आश्रमके जिन बच्चोंको यों अरसे तक बापूकी लाठी बननेका मौक़ा नहीं मिलता, वे मन-ही-मन मुरझाये रहते हैं।

लेकिन यह न समझना कि बापूकी लाठी बनना कोअी आसान काम है।

लोग शायद सोचते होंगे: 'गांधीजी बूढ़े हैं; धीमे-धीमे, डगमगाते हुअे चलते होंगे।' लेकिन बात अैसी नहीं है। बापूको हमेशा 'डबल मार्च'की चालसे चलनेकी आदत है। अैसे समय अगर अुनकी ज़िन्दा लाठियाँ नन्ही हुअीं, तो बेचारियोंको बरबस अुनके साथ दौड़ना ही पड़ता है।

अिस तरह हवाख़ोरीकी मस्तीमें और बातोंके सपाटोंमें अक्सर बच्चोंको — बाल-लाठियोंको — प्रार्थनाके वक़्तका ख़याल भूल जाता है। लेकिन गांधीजी भला अुसे क्योंकर भूलने लगे? वे जब देखते हैं कि समय होने आया, तो झट दौड़ना शुरू कर देते हैं, फिर तो अुनके साथ अुनकी लाठियोंको भी दौड़ना पड़ता है।

१९
पोशाकका अितिहास

अेक जमाना था, जब गांधीजी कोट, पतलून और टोप पहनते थे। फिर अुन्होंने कुर्ता और लुंगी पहनना शुरू किया। अिसके बाद वे धोती, अँगरखा और साफ़ा पहनने लगे। फिर खादीका पंचा, खादीका कुर्ता और खादीकी टोपी अुनकी पोशाक बनी। बताओ, आजकल वे क्या पहनते हैं?

खादीकी अेक लँगोटी!

गांधीजीने समय-समयपर अपनी पोशाकमें जितने फेर-बदल किये, अुनका अितिहास बड़ा दिलचस्प और जानने लायक़ है।

अपनी जवानीके दिनोंमें वे दक्षिण अफ्रीका रहने गये थे। वहाँ वे बैरिस्टरी करते और दूसरे सभी वकील-बैरिस्टरोंकी तरह परदेशी ढंगकी पोशाक पहनते थे।

दक्षिण अफ्रीका जानेके बाद गांधीजीने देखा कि वहाँ हिन्दुस्तानियोंका बेहद अपमान किया जाता है। अिसपर अुन्होंने वहाँके हिन्दुस्तानियोंको सिखाने, पढ़ाने, संगठित करने और सत्याग्रहकी

खूबियाँ समझानेका काम शुरू किया। अुनकी सत्याग्रही सेनाके सैनिकोंमें ज्यादातर हिन्दुस्तानके ग़रीब मज़दूर ही थे। फिर यह कैसे हो सकता था कि अिन मज़दूर सैनिकोंका सत्याग्रही सरदार अिनसे ज्यादा अच्छी पोशाक पहनता, या ज्यादा अच्छा खाना खाता? गांधीजी-जैसा सरदार अिस भेदभावको क्योंकर बरदाश्त करता? बस, अुन्होंने अुन्हीं दिनों निश्चय कर डाला कि अुनके मज़दूर भाअी जैसे कपड़े पहनते हैं, वैसे ही वे भी पहनेंगे।

अिन सत्याग्रही मज़दूरोंमें ज्यादातर मज़दूर मद्रासके थे, जो सिर्फ़ कुर्त्ता और लुंगी ही पहनते थे। चूँकि गांधीजी अिन्हीं सत्याग्रहियोंके सरदार थे, अिसलिअे वे ख़ुद भी लुंगी और कुर्त्ता पहनने लगे, और विदेशी कोट-पतलूनको धता बता दी।

जब दक्षिण अफ्रीकाके हिन्दुस्तानियोंकी जीत हो गअी, तो गांधीजीने सोचा: 'अब मुझे अपने देश जाकर भारतमाताकी सेवा करनी चाहिये।'

अिसके साथ सवाल यह पैदा हुआ कि हिन्दुस्तानमें पोशाक कैसी पहनी जाय? गांधीजी स्वभाव ही से सत्याग्रही हैं; अिसलिअे अैसी छोटी-छोटी बातोंमें भी वे सत्यकी छान-बीन करके ही क़दम बढ़ाते हैं। फिर यह कैसे हो सकता था कि वे किसी जैसी-तैसी पोशाकको पहनकर अपने देशमें वापस आते? अिस बार घरमें विलायती कोट-पतलून पहनकर आना अुन्हें रुचा ही नहीं। लुंगी परदेशमें लुंगीवालोंके साथ जँचती थी, अपने देशमें वह क्योंकर जँचती?

आख़िर सोचते-विचारते अुन्होंने तय किया कि अपनी जन्मभूमि काठियावाड़की पोशाक पहनकर ही वे हिन्दुस्तानकी भूमिपर पैर रक्खेंगे।

अिस तरह जब गांधीजी अफ्रीकासे हिन्दुस्तान लौटे, तो धोती, कुर्त्ते और अँगरखेके साथ माथेपर काठियावाड़ी फेंटा बाँधते और कन्धेपर दुपट्टा रखते थे।

२०

खादी

यह अुन दिनोंकी बात है, जब गांधीजीको न तो चर्खा ही मिला था, और न अुनके साथियोंमें कोअी कातना ही जानता था। वह अेक अैसा जमाना था, जब शुद्ध खादीका नाम भी किसीको मालूम न था। ये सारी बातें तो बादमें पैदा हुअीं। अिससे पहले गांधीजी देशी मिलोंके कपड़ेका ही अुपयोग करते थे। बादमें अुनके साथियोंमेंसे कुछने हाथ-कर्घेपर कपड़ा बुनना सीखा, और तबसे गांधीजी कर्घेका बुना हुआ मोटा कपड़ा पहनने लगे। लेकिन कर्घेके लिअे भी सूत तो मिलका ही काम आता था। अुन दिनों हाथ-कता सूत देता कौन?

यों होते-होते कअी दिनों बाद बड़ी मुश्किलसे गांधीजीको श्रीमती गंगाबहन मजूमदार मिलीं, जिनकी मददसे अुन्होंने चर्खा पाया।

फिर तो वे और अुनके कअी साथी-संगी चर्खा चलाना सीखे, और यों चर्खेपर कता हुआ सूत बुना भी जाने लगा।

अब भला गांधीजी मिलके सूतका कपड़ा क्यों पहनने लगे? अुन्होंने तभीसे शुद्ध खादीके कपड़े पहनने शुरू कर दिये! वे खादीके कपड़े पहनने तो लगे, पर पहनते पूरी पोशाक थे। खादीकी लम्बी धोती, खादीका कुर्त्ता, कुर्त्तेपर लम्बी बाँहोंवाला अँगरखा, सरपर

खादीका लम्बा फेंटा और कन्धेपर खादीका दुपट्टा—यही अुन दिनोंकी अुनकी पोशाक थी। अितने सारे कपड़े पहनकर घूमना-फिरना अुन्हें अच्छा तो न लगता था, फिर भी महज़ सभ्यताके ख़यालसे वे अिन कपड़ोंको लादे रहते थे।

अितनेमें अेक घटना अैसी घट गअी कि गांधीजीको अपना तरीक़ा बदल देना पड़ा। अुन्होंने सोचा: ‘अिस झूठी सभ्यताके ख़ातिर मैं क्यों नाहक़ अितने कपड़े लादे फिरूँ? अिन सबकी ज़रूरत ही क्या है?’ बस, अिसी घटनाके कारण खादीकी टोपीका जनम हुआ।

२१
खादीकी टोपी

अहमदाबादके मिल-मज़दूरोंका मिल-मालिकोंसे झगड़ा हो गया। मज़दूरोंने हड़ताल कर दी। अनसूयाबहन अिन हड़तालियोंकी अगुआ बनीं। जहाँ अनसूयाबहन अगुआ हों, वहाँ गांधीजी न रहें, यह कैसे हो सकता था?

क़रीब अेक महीने तक झगड़ा चला। गांधीजी रोज़ मज़दूरोंसे मिलते और रोज़ अुन्हें अपनी बातें समझाते।

ग़रीब मज़दूरोंकी रोज़ी मारी जा रही थी। अुन्हें पेटभर खानेको नहीं मिलता था। फिर भी वे अुत्साहके साथ गांधीजीकी बातें सुनने आते थे, और अपनी हड़तालपर चट्टानकी तरह क़ायम थे।

जैसे-जैसे दिन बीतते गये, गांधीजी मज़दूरोंमें, और मज़दूर गांधीजीमें घुलते-मिलते गये। दोनोंमें जो फ़र्क़ दिखाअी पड़ता था,

वह .खुद गांधीजीको ही अखरने लगा। अुन्होंने सोचा: 'जब अिन मज़दूरोंसे पास पहननेको पूरे साबित कपड़े तक नहीं हैं, तब मुझे क्या हक़ है कि मैं अपने तनपर अितने सारे कपड़े लादे फिरूँ ? मेरी अिस लम्बी पगड़ीकी दस टोपियाँ बन सकती हैं, और दस आदमियोंके सिर ढँक सकती हैं।' बस, तभीसे गांधीजीने पगड़ी या फेंटा पहनना छोड़ दिया और टोपी पहनना शुरू कर दिया। अुन्होंने अपनी धोतीका कपड़ा भी कम कर दिया। लम्बे अँगरखेको बेकार समझ छोड़ दिया, और आधी बाँहोंवाले छोटे कुर्तेसे काम चलाने लगे। अिस तरह जब गांधीजीने पोशाकमें भी मजदूरोंका ढंग अपना लिया, और .खुद मजदूर-से बन गये, तब कहीं अुनकी सत्याग्रही आत्माको तसल्ली हुअी।

२२

सफ़ेद टोपी

जब गांधीजीने पहले-पहल सफ़ेद टोपी पहननी शुरू की, तो लोगोंको बड़ा अचरज हुआ।

लोग कहने लगे: 'सफ़ेद टोपी ? अजी, कहीं टोपी भी सफ़ेद हुअी है ? टोपी लाल हो सकती है, हरी हो सकती है, पीली या काली हो सकती है, मगर यह सफ़ेद टोपी कैसी ? अिसे टोपी कहेगा कौन ?'

जब गांधीजी सफ़ेद टोपी पहनकर बाजारमें निकलते, तो लोग अेक-दूसरेको दिखाकर हँसते हुअे कहते: 'अजी देखो तो, गांधीजीने यह क्या पहना है ?' कुछ मनचले मज़ाक भी अुड़ाते। कहते: 'यह टोपी है, या काशीके पण्डेका कनटोप ?'

लेकिन लोगोंके अिस हँसी-मज़ाकपर ध्यान देनेकी फ़ुरसत किसे थी ? गांधीजीने तो कभी अिन बातोंका ख़याल ही नहीं किया। वे कहते : 'लोगोंको यह टोपी अच्छी नहीं लगती, भले न लगे। यह तो मानना ही पड़ेगा कि अिससे खादीकी बचत होती है, और फ़िज़ूलख़र्ची रुकती है।'

किसीने समझौता करानेकी ग़रज़से कहा : 'गांधीजी खादीकी टोपी पहनना पसंद करते हैं, भले करें। पर सफ़ेद टोपीकी यह ज़िद क्यों ? क्या वे अुसे रँगवाकर पहन नहीं सकते ? सफ़ेद टोपी तो बहुत जल्द मैली हो जाती है।'

सच पूछो तो जितना मैल सफ़ेदपर जमता है, अुतना ही कालीपर भी; लेकिन कालेमें काला अिस तरह छिप जाता है कि काली चीज़ मैली नहीं दिखाअी पड़ती।

अिसलिअे गांधीजीका अेक ही जवाब रहा : 'भअी, मैल छिपानेके लिअे रंगीन टोपी पहननेसे बेहतर तो यह है कि मैली टोपी झट-झट धो डाली जाय। हमारी यह सफ़ेद टोपी रोज़ धुल सकती है, और रोज़ नअी रह सकती है। हम अुसपर मैल जमने ही क्यों दें ?'

लोगोंको बात जँच गअी, और सफ़ेद टोपी जी गअी!

२३

सफ़ेद टोपी ज़िन्दाबाद !

सफ़ेद टोपी लम्बी अुमर लेकर जनमी थी। गांधीजीके समान अटल सत्याग्रही अुसके जनक थे। फिर विरोधका पहाड़ भी टूट पड़े, तो अुसकी बलासे! वह क्यों मरने लगी?

मरना तो दर किनार, वह दिन दूनी, रात चौगुनी फलने-फैलने लगी!

हँसी अुड़ानेवाले रफ़्ता-रफ़्ता चुप हो गये। सफ़ेद टोपी सबको जँच गअी — पसन्द आ गअी।

ग़रीबोंने सस्ती समझकर अुसे अपनाया।

सफ़ाअी-पसन्द लोगोंने अुसकी सफ़ाअीको पसन्द किया और पहनने लगे। रोज धोओ, रोज साफ़! कम ख़र्च, बाला नशीं।

कवियों और कलाकारोंने भी अुसे अपनाया। अुसकी सुन्दरताकी जी-भर सराहना की। पुरानी टोपियोंका काला-कलूटापन अुनकी रसिक आँखोंको अखरने लगा।

स्वयंसेवकोंकी तो वह राष्ट्रीय पोशाक ही बन गअी।

बच्चे सफ़ेद टोपी पहनकर शानसे घूमने लगे। अुसे पहनकर वे अपनेको भारतमाताका सिपाही समझने लगे।

यों होते-होते खादीकी सफ़ेद टोपीका नाम अुसके चलानेवालेके नामपर मशहूर हो गया। अब वह गांधी टोपी कहलाने लगी।

२४
गांधी टोपी

सेठ — मुनीमजी, अबसे आप गांधी टोपी पहनकर न आया करिये ।

मुनीम — सेठजी, आप तो अैसी बात कह रहे हैं, जो मानी नहीं जा सकती ।

सेठ — सो आप जानिये । लेकिन हमारे यहाँ गांधी टोपी नहीं चलेगी ।

मुनीम — देखिये, मैं खादीके कपड़े पहननेका व्रत ले चुका हूँ। क्या व्रत तोड़ दूँ ?

सेठ — आप खादी पहनिये : खादी पहननेसे कौन रोकता है ? हम कहते यही हैं कि रँगाकर पहनिये : काली, नीली, जैसी आपको पसन्द हो ।

मुनीम — मुझे सफ़ेद पसन्द है, और मैं सफ़ेद ही पहनूँ तो आपको कोअी अेतराज़ क्यों होना चाहिये ?

सेठ — नौकरी करनी हो तो जैसा कहते हैं, कीजिये । सफ़ेद टोपी पहननेसे आप स्वयंसेवक दिखाअी पड़ते हैं । अगर किसीको मालूम हो जाय, कि हमारे यहाँ स्वयंसेवक नौकर है, तो हमारा बड़ा नुकसान हो सकता है ।

मुनीम — साहब, यह सब मेरी समझमें नहीं आता । मैं आपकी नौकरी अीमानदारीसे करता हूँ । आपको और चाहिये क्या ? मैं टोपी सफ़ेद पहनूँ या काली, अिसमें आपका नुकसान कैसा ?

सेठ — देखिये मुनीमजी, नाहक मेरा दिमाग़ न चाटिये। यह गांधी टोपी है। अगर हमारे यहाँ कोअी गांधी टोपीवाला रहा, तो बरबस लोगोंका शक हमपर रहेगा।

मुनीम — अजी साहब, अिसमें शककी क्या बात है? गांधीजी तो हमारे देशके सबसे पवित्र पुरुष हैं। अुनके-जैसी पाक हस्ती और है किसकी?

सेठ — सो हो सकती है; लेकिन आप तो कलसे गांधी टोपी छोड़कर ही कामपर आअिये।

मुनीम — टोपी तो मैं नहीं छोड़ सकूँगा।

सेठ — तो फिर नौकरी छोड़नी होगी।

मुनीम — जैसी आपकी मरज़ी।

सेठ — देखिये, फिर पछताअियेगा! अिस मनहूस टोपीके पीछे नौकरी क्यों खोते हैं?

मुनीम — आपकी अिस नेक सलाहके लिअे मैं आपका बहुत ही अहसानमन्द हूँ। लेकिन पेटके ख़ातिर मैं अपने देशका और गांधीजीका अपमान सहना नहीं चाहता। नमस्कार!

अूपरकी बातचीत वैसे तो मनगढ़न्त है, लेकिन सरकारी दफ़्तरोंमें, परदेशी व्यापारियोंकी पेढ़ियोंमें, और कुछ हिन्दुस्तानी व्यापारियोंकी पेढ़ियोंमें भी अैसी घटनायें सचमुच घट चुकी हैं।

बहादुर नौकरोंने नौकरीको ठुकरा दिया, पर गांधी टोपीको न छोड़ा।

वैसे देखा जाय, तो गांधी टोपीकी क़ीमत सिर्फ़ चार आने हैं। लेकिन अब तो अुसकी क़ीमत अितनी बढ़ चुकी है कि वह बेशक़ीमती ही नहीं, बेमोल हो गअी है।

अुसकी पहली .खूबी यह है कि अुसके चलानेवाले गांधीजी हैं।

दूसरी .खूबी यह है कि वह पवित्र खादीकी बनती है।

तीसरी .खूबी यह है कि वह हमेशा बगुलेके परकी तरह साफ़ रक्खी जा सकती है।

चौथी .खूबी यह है कि वह .खूबसूरत है।

पाँचवीं यह कि वह हलकी, सादी और सस्ती है।

छठी यह कि वह हमारी राष्ट्रीय पोशाकका नमूना है।

सातवीं यह कि अुसका नाम गांधीजीके नामके साथ जुड़ा हुआ है।

और बड़ीसे बड़ी .खूबी यह है कि अुसके लिअे सैकड़ों देशभक्तोंने तरह-तरहकी कुर्बानियाँ की हैं।

भला, अैसी अनमोल गांधी टोपीको पहनकर किसे अभिमान न होगा?

२५

सिर्फ कुर्त्ता

हमें गांधीजीका अहसान मानना चाहिये कि अुन्होंने सिर्फ़ अेक कुर्त्ता पहनकर घूमने-फिरनेका रास्ता हमारे लिअे खोल दिया।

जानते हो, पहले क्या होता था।

बाप रे बाप! सबके नीचे बनियान, अुसपर कमीज़, कमीज़पर जाकट और जाकटपर कोट।

अिस सारे ठाटके साथ जब दुपहरकी गरमी पड़ती थी, तो मज़ा आ जाता था। सारा बदन अन्दरसे आलूकी तरह सीज जाता और पसीना बदबू मारने लगता। लेकिन कोअी माअीका लाल अैसा न था, जो हिम्मत करके अिन सबको ठुकरा देता और सीधी-सादी पोशाकमें घरसे बाहर निकलता।

अगर कोअी बिना कोट पहने बाज़ारमें चला आता, तो अुसपर अँगुलियाँ अुठतीं — अुसकी पोशाक अधूरी मानी जाती। गरमी बरदाश्त हो, चाहे न हो, कोट तो पहनना ही चाहिये। बिना कोटके पूरी पोशाक कैसी?

बिना कोटके स्कूलमें जाना तक मना था। कोअी अन्दर घुसने न देता। लोग कहते: 'अधूरी पोशाक पहनकर पाठशालामें आना मना है।'

बिना कोटके कोर्टों और कचहरियोंमें कोअी खड़ा न रहने देता। लोग कहते: 'अैसे जंगली आदमियोंका यहाँ कोअी काम नहीं।'

सब परेशान थे। सब तकलीफ़ पाते थे। पर जंगलियोंमें शुमार होनेकी हिम्मत कौन करे?

आखिर सत्याग्रही गांधीजीने यह हिम्मत दिखाअी और सबके पहले सिर्फ़ कुर्ता पहनकर निकलना शुरू किया।

लोग हँसी अुड़ाने लगे। गांधीजी कहते: 'हँसनेवाले हँसा करें। दरअसल तो अिस गरम देशमें अितने कपड़े लादकर फिरना ही जंगलीपन है। तिसपर हमारा यह देश अितना गरीब है। ग़रीबोंके अिस देशमें ज़रूरतसे ज़्यादा कपड़े पहनना भी अेक पाप है।'

फिर तो सबमें हिम्मत आ गअी। सब कोअी सिर्फ़ कुर्ता पहनकर निकलने लगे। बड़े भी, बूढ़े भी, और बच्चे भी। बच्चे तो खुश-खुश हो गये!

खादीका कुर्ता और खादीकी टोपी हमारी राष्ट्रीय पोशाक बन गअी।

२६

भाषाओंका ज्ञान

वैसे गांधीजी कअी भाषायें जानते हैं। पर अुन्होंने पण्डित बननेके ख़यालसे कभी कोअी ज़बान नहीं सीखी। जो कुछ सीखा, सेवाके विचारसे सीखा।

गुजराती तो अुनकी अपनी ज़बान है — मातृभाषा है।

माता पिताके कहनेसे अंग्रेज़ी अुन्होंने स्कूलमें सीखी; फिर विलायत गये, वहाँ सीखी। दक्षिण अफ्रीकामें बरसों रहे, वहाँ वह पक्की हुअी।

अफ्रीकामें अुन्हें मुसलमान भाअियोंके बीच रहने और काम करनेका मौक़ा मिला। अुनकी सेवा करते-करते वे अुर्दू बोलना और समझना सीख गये।

अिसी तरह अफ्रीकामें अुन्हें मद्रासी मजदूरोंके साथ कामकाज पड़ा। वे लोग बहुत बड़ी तादादमें सत्याग्रही बनकर गांधीजीके साथ हुअे। अुनकी सेवाके विचारसे गांधीजीने कामचलाअू तामिल भी सीखी।

हिन्दुस्तानके कोने-कोनेमें अपना संदेश पहुँचानेके ख़यालसे गांधीजीने कअी बार सारे देशका दौरा किया। अिन दौरोंमें अुन्हें राष्ट्रभाषाके नाते हिन्दुस्तानीका महत्त्व पट गया। अुन्होंने देखा कि किसी भी प्रान्तमें जाकर वे हिन्दुस्तानी ज़बानमें अपनी बात लोगोंको समझा सकते हैं — लोग हर जगह हिन्दुस्तानी समझ लेते हैं। पहले गांधीजीका हिन्दी-हिन्दुस्तानीका ज्ञान बहुत कच्चा था, लेकिन अब अुन्होंने अुसपर काफ़ी क़ाबू हासिल कर लिया है।

गांधीजी अिन भाषाओंको पढ़कर नहीं सीखे। रोज़-रोज़के अभ्याससे, अनुभव और तजरबेसे सीख गये। अब भी जब कभी मौक़ा मिलता है, वे अिनका अभ्यास बढ़ाने और अिन्हें सुधारनेकी कोशिश ज़रूर करते हैं।

जब-जब लम्बी मुद्दतोंके लिअे अुन्हें जेलमें रहना पड़ा, अुन्होंने तामिल और अुर्दू सीखनेकी ख़ास कोशिश की।

कोअी यह नहीं कह सकता कि गांधीजी मराठी ठीक-ठीक जानते हैं; फिर भी अेक बार दक्षिण अफ्रीकामें अुन्होंने गोखलेजीका अेक भाषण मराठीमें करवाया था, और ख़ुद दुभाषिया बन कर अुसका तरज़ुमा किया था। अुसके बाद तो वे कअी साल यरवड़ा जेलमें रहे,

और अब सेवाग्राममें रहते हैं, अिसलिअे मराठीमें भी काफ़ी तरक़्क़ी कर चुके हैं।

बचपनमें थोड़ी संस्कृत वे स्कूलमें सीखे थे। बादमें जेल जानेपर अुन्होंने अिस भाषाका वहाँ अच्छा अभ्यास बढ़ा लिया।

विलायतमें रहते हुअे गांधीजीने यूरोपकी पुरानी भाषा लैटिनका और वहाँकी राष्ट्रभाषा-जैसी फ्रेंच भाषाका भी काम चलाअू ज्ञान प्राप्त कर लिया था।

अपनी मातृभाषा गुजरातीका तो गांधीजीने बहुत ही विकास किया है। अुनकी भाषा सीधी, सरल, आडम्बरहीन, तेजस्वी और भावोंसे भरी रहती है।

२७

ख़ूराकके प्रयोग

खाने-पीनेके मामलेमें तरह-तरहके तजरबे करनेका शौक़ गांधीजीको बचपन ही से है। अपनी जिन्दगीमें अुन्होंने अैसे अनगिनत प्रयोग किये हैं; अपने आपपर अुन्हें आज़मा कर देखा है; और कअी दफ़ा तो अिसीकी वजहसे अपनी जानको भी ख़तरेमें डाला है।

अुनका बड़ेसे बड़ा प्रयोग दूधका है। किसी भी चौपायेका दूध पीनेमें गांधीजी अेक तरहका अधर्म और हिंसा महसूस करते हैं। वे सोचते हैं: भगवान्‌ने जो चीज़ दुधारू जानवरोंके बछड़ोंके लिअे पैदा की है, अुसपर अपना हक़ जमा लेना, अिन्सानके लिअे बहुत बड़ा पाप है — पाप माना जाना चाहिये। वैसे देखा जाय तो दूधकी

ख़ूराकको भी हम अेक तरहका मांसाहार ही कह सकते हैं। जब अिस तरहके ख़याल मज़बूत होते गये, तो गांधीजीने अपनी .ख़ूराकमेंसे दूधको हटा देनेका, दूध छोड़ देनेका, व्रत ले लिया।

कअी सालों तक अुन्होंने दूधको छुआ तक नहीं। अिसी अरसेमें वे अेक बार अितने सख़्त बीमार हुअे कि बचनेकी कोअी अुम्मीद न रही। डॉक्टरोंने कह दिया कि अगर गांधीजी दूध लेना शुरू करें, तो मुमकिन है, बच जायँ! आख़िर श्रीमती कस्तूरबाके समझाने और आग्रह करनेपर गांधीजीने बकरीका दूध लेना क़बूल किया, और अबतक वे बराबर बकरीका ही दूध लेते हैं।

दूधके बारेमें जो तजरबा अुन्हें हुआ, अुस परसे गांधीजी अब यह मानने लगे हैं कि बिना दूधके आदमीका काम चल नहीं सकता। लेकिन साथ ही अुन्हें यह भी अुम्मीद है कि किसी दिन कोअी अैसा वैज्ञानिक अिस देशमें जनमेगा, जो वनस्पतिसे दूधके-से गुणोंवाली ख़ूराक तैयार करके अुसे लोगोंके लिअे सुलभ बना देगा।

नमकके बारेमें भी गांधीजीका यह ख़याल रहा कि अिन्सानके लिअे वह ज़रूरी नहीं है। और अिसीलिअे कअी साल तक अुन्होंने नमक नहीं खाया। लेकिन बादमें अुन्हें यक़ीन हो गया कि आदमीकी .ख़ूराकमें अिस चीज़की भी ज़रूरत है, अिसलिअे फिर नमक खाना शुरू कर दिया।

गांधीजीका ख़याल है कि अिन्सानकी पूरी और सच्ची .ख़ूराक फल ही है। मनुष्यके शरीरकी बनावट, उसके हाथ-पैरोंकी गढ़न, अुसके दाँत, अुसका पेट, अिन सबकी तासीरको देखते हुअे साफ़ मालूम होता है कि भगवान्‌ने मनुष्यको फल खानेके लिअे ही पैदा

किया है। हम देखते हैं कि बन्दर, जो सूरत-शकलमें आदमीसे बहुत कुछ मिलता-जुलता है, फल खाकर ही जीता है; अिससे भी हमारी बातको बल मिलता है।

लेकिन जैसी ग़रीबी आज अिस देशमें है, अुसमें यहाँके लोग फल कैसे खा सकते हैं? शायद अिसी ख़यालसे गांधीजीने मूँगफली, खजूर और केले-जैसे कुछ सस्तेमें सस्ते फल खोज निकाले, और ख़ुद कओी सालों तक अिन्हीं फलोंपर रहे।

खाना पकानेके बारेमें भी गांधीजीका ख़याल है कि जिन तरीक़ोंसे वह आजकल पकाया जाता है, वे ठीक नहीं हैं। अुनके विचारमें दरअसल तो खानेकी चीज़ोंको आगपर चढ़ाकर पकानेकी कोओी ज़रूरत ही नहीं। जो फल सूरजकी गरमीमें डालने पर पक जाते हैं, वे पूरी ख़ूराकका काम दे सकते हैं; अुन्हें दुबारा आग पर पकाना अुनको बेकस बनाना है।

अेक बार गांधीजीको यह ख़याल सूझा कि अगर अनाजको भिगोकर अँकुवा लिया जाय, और अुसको अुसी रूपमें खाया जाय, तो औरतोंको चूल्हा फूँकनेसे छुट्टी मिल सकेगी और ख़र्चमें भी काफ़ी बचत हो जायगी। भिगोया हुआ अनाज ख़ूब चबा-चबा कर खाना पड़ता है, अिसलिअे पकाये हुअे के मुक़ाबलेमें कम खाया जाता है।

अगर यह चीज़ सध जाय तो देशके ग़रीबोंके लिअे अेक अच्छा वरदान बन सकती है। अुन दिनों गांधीजीकी तन्दुरुस्ती अिस लायक़ नहीं थी कि वे अैसा ख़तरनाक तजरबा अपने अूपर करते; लेकिन अुन्होंने किया। कुछ महीनोंके अनुभवके बाद जब यह भरोसा हो गया

कि असी .खूराकको अिन्सान आमतौर पर हमेशा हज़्म नहीं कर सकता, अुन्होंने अिस चीज़को भी छोड़ दिया ।

लोग धानको कूट-खाँड कर चावलोंको अितना सफ़ेद कर लेते हैं, कि वे बिलकुल बेकस हो जाते हैं, और फिर बड़े चावसे अुन्हीं निकम्मे चावलोंको खाते हैं । गेहूँ वग़ैरा नाजके चोकरको फेंककर महीन मैदे-जैसा आटा खानेमें शान समझते हैं । सच पूछा जाय तो भूसी और चोकरमें नाजकी असली ताक़त रहती है; अुसको फेंक देनेका मतलब है, रसको थूककर गुठली चबाते बैठना । जबसे गांधीजीको अिस सचाअीका पता चला, वे बराबर यह कोशिश कर रहे हैं कि लोग हाथकुटे चावल और चोकरवाला हाथपिसा मोटा आटा खायें ।

अब तो गांधीजीकी तन्दुरुस्ती काँचके कंगनकी तरह कमज़ोर पड़ गअी है; फिर भी .खूराकके मामलोंमें अुनकी दिलचस्पी क़ायम है, और छोटे-मोटे प्रयोग तो आज भी हर रोज़ चलते ही रहते हैं ।

२८

कुदरती अिलाज

बीमारीका नाम सुनते ही लोग अक्सर हावरे-बावरे हो जाते है; हक़ीमों या डॉक्टरोंके घर दौड़े जाते हैं; और अुन्हींको अपना तारनहार समझ लेते हैं। भगवान्‌की दी हुअी अिस देहको तन्दुरुस्त रखने या अिस अनोखे यंत्रकी बनावटको समझ लेनेका हमारा अपना भी कुछ जिम्मा है, अिस बातको हम आज भूल-से गये हैं। अिसीलिअे बीमारी भोगकर अुठनेके बाद जब चंगे हो जाते हैं, तो फिर मनमाना खाने-पीने लगते हैं, और मौज-शौक़ या भोग-विलासमें डूबकर अपनी जिम्मेदारीको भूल जाते हैं।

अिस बारेमें गांधीजीके विचार ख़ास तौरसे समझने लायक़ हैं।

पहली बात तो यह है कि बीमारीमें घबराना न चाहिये। जो अिलाज हो सकता है, वह जरूर करना चाहिये; लेकिन डॉक्टरको भगवान् समझ लेनेकी भूल न करनी चाहिये।

दूसरे, जितनी बीमारियाँ हैं, वे अक्सर खाने-पीनेकी गड़बड़से ही पैदा होती हैं, अिसलिअे भरसक अैसी गड़बड़ न होने देनी चाहिये।

अितनेपर भी अगर बीमारी आ ही पड़े, तो अपने दिलको अिस ख़यालसे समझाना चाहिये कि बहुतेरी बीमारियाँ अिसलिअे भी आती हैं कि वे देहरूपी मशीनके कल-पुर्जोंको बेजा बोझसे हलका कर दें, और अुसे फिरसे अच्छी तरह काम करने लायक़ बना दें। अिसलिअे बीमार पड़ते ही दवाअियोंकी बोतलोंपर बोतलें खाली न करनी चाहियें, बल्कि बीमारीको अपना काम करनेका मौक़ा देना चाहिये। अिससे

कुछ ही दिनोंमें रोग अपने आप मिट जाता है, और शरीरके दोषोंको भी मिटनेका मौक़ा मिलता है।

बीमारीमें दवाअियोंका सहारा लेनेके बदले कुदरती अिलाज करना गांधीजीको ज्यादा पसन्द है। गीली मिट्टीकी पट्टी रखनेसे और पानीमें कमर तक बैठनेसे (कटिस्नानसे) बुरेसे बुरा, जहरीला बुख़ार और दूसरी बीमारियाँ मिट जाती हैं। गांधीजी बड़े शौक़से अिनका प्रयोग करते हैं।

अपने आपपर और अपने प्यारे-से-प्यारे स्वजनोंपर भी अुन्होंने कअी बार ये प्रयोग किये हैं, और अिनमें वे कामयाब भी हुअे हैं।

सूरजकी रोशनीमें रहना और खुले आसमानके नीचे सोना भी गांधीजीके कुदरती अिलाजोंमें शुमार हैं।

लेकिन अुनका बड़ेसे बड़ा अिलाज अुपवास या फ़ाक़ेका ही है। अुन्होंने कअी भाअियों और बहनोंको बढ़ावा दे-देकर अपनी देखरेखमें अुपवास करनेको राजी किया है, और अिस तरह अुनको तन्दुरुस्त बनाया है।

जो गांधीजीके पास रहते हैं, अुन्हें अक्सर यह देखनेको मिलता है कि कअी बीमारियाँ तो सिर्फ़ .खूराकमें थोड़ा हेरफेर करनेसे दूर हो जाती हैं।

यों, सौमें अस्सी बीमारियाँ तो कुदरती अिलाजोंसे ही दूर हो जाती हैं। अिसलिअे अिन बीमारियोंसे घबराकर सीधे डॉक्टरकी शरणमें जाना मनुष्यको शोभा नहीं देता।

फिर भी गांधीजीका ख़याल है कि चन्द जहरीली या ख़तरनाक बीमारियोंके लिअे कुछ अचूक दवायें और होशियार सर्जनोंकी मदद,

अुनकी चीरफाड़, जरूरी है। खुद गांधीजीको भी अिस तरहके कअी तजरबोंमेंसे गुजरना पड़ा है।

मगर किसी भी हालतमें बीमारीको देखकर बेकल हो जाना तो अिन्सानकी शानके खिलाफ़ ही है। गांधीजीके पुत्र श्री रामदासभाअीने और श्रीमती कस्तूरबाने अपनी लम्बी और भयावनी बीमारीके दिनोंमें भी मांसका शोरवा लेनेसे अिनकार कर दिया था। डॉक्टरोंने बहुतेरा कहा, पर दोनोंने हँसते-हँसते मर जाना पसन्द किया, मगर मांस खानेसे क़तअी अिनकार कर दिया। अुनकी अिस दृढ़ताको देखकर गांधीजीकी आत्मा बहुत पुलकित हुअी, और अुन्होंने अपने प्यारे बीमारोंको अुनकी बहादुरीके लिअे जी-जानसे असीसा!

बीमारीके दिनोंमें घरवाले बाहर रहकर जितनी दौड़धूप मचाते हैं, अुसके मुक़ाबले मरीजकी जितनी प्यारभरी सेवा होनी चाहिये, नहीं होती। गांधीजीको बीमारोंकी सेवाका बड़ा शौक़ है। देशका बड़ेसे बड़ा काम भी अुनको अक्सर अिसके आगे फीका जँचता है। अपनी ताक़त भर वे बीमारोंकी सेवाके अवसरको हाथसे जाने नहीं देते। अिसलिअे जो भाअी-बहन बीमार पड़कर अुनकी निगरानीमें अच्छे होते हैं, वे अपनी तक़दीरको सराहे बिना नहीं रहते। अुन्हें अपना वह सौभाग्य कभी नहीं भूलता!

२९

दरिद्रनारायणके दर्शन

हिन्दुस्तानका दौरा करते-करते अेक बार गांधीजी अुड़ीसा पहुँचे।

अुड़ीसाकी ग़रीबी अिस देशमें अेक कहावत बन गअी है। सारी दुनियामें सबसे ग़रीब देश हमारा हिन्दुस्तान है, और अुड़ीसा अिसी हिन्दुस्तानका अेक बहुत ही ग़रीब सूबा है। वहाँ आदमी नहीं रहते, जीवित नरकंकाल रहते हैं—हड्डियोंके जिन्दा ढाँचे! अकाल कभी अुनका पीछा नहीं छोड़ता। लोगोंको शायद ही कभी दो जून भरपेट खानेको मिलता है। अैसी हालतमें तन ढँकनेको कपड़े कहाँसे मिलें?

अुड़ीसाकी ग़रीबीकी ये बातें गांधीजीने सुनी तो बहुत थीं, मगर अुस ग़रीबीको अपनी आँखों पहली बार अिसी दौरेमें देखा।

गांधीजी ग़रीब अुड़ीसाके गाँवोंमें घूमे। गाँव क्या थे, खँडहरोंकी नुमाअिश! बीच-बीचमें टूटीफूटी झोंपड़ियाँ भी मिलती थीं, जिनमें भूख और प्याससे बेदम मर्द, औरत और बच्चे तड़पते पाये जाते थे। औरतोंके बदनपर फटे-पुराने चिथड़े लिपटे थे। अिन चिथड़ोंकी यह बिसात न थी कि अुनके तनको पूरी तरह ढँके रहें! सिर्फ़ कमरका हिस्सा जैसा-तैसा ढँका मिलता था। बाक़ीके तनको ढँकनेका, लाजको छिपानेका, कोअी सामान न था।

अिन दृश्योंको देखकर गांधीजी बहुत ही दुखी हुअे।

‘हे भगवन्! मेरे देशकी अैसी घोर ग़रीबी! क्या अिस ग़रीबीको मिटानेके लिअे मैं कुछ नहीं कर सकता?’

अुस दिन मानो गांधीजीने दरिद्रनारायणके सच्चे दर्शन किये ।

हिन्दुस्तानके दूसरे सब सूबोंके मुक़ाबले अुड़ीसाके लिअे गांधीजीके दिलमें बड़ा दर्द है। अुनकी करुणापर अुड़ीसाका बहुत बड़ा अधिकार है!

३०

लँगोटी

चम्पारनमें किसानोंको निलहे गोरोंकी .गुलामीसे छुड़ाकर गांधीजी वहीं गाँवोंमें रहने और गाँववालोंकी सेवा करने लगे।

अेक दिन किसी गाँवमें अुन्होंने कुछ औरतोंको बहुत ही गन्दी हालत में देखा। गांधीजीने कस्तूरबासे कहा कि वे जायें और अुन बहनोंको रोज़ नहाना और धुले हुअे कपड़े पहनना सिखायें।

बा गअीं। अुन्होंने अुन बहनोंसे बातचीत की। अुन्हें समझाया: 'बहनो, आपको कपड़े रोज़ धोने चाहियें। धोने-धानेमें अितनी सुस्ती न करनी चाहिये।'

जो बहनें गन्दे कपड़े पहने थीं, अुन्होंने कस्तूरबाको अेक नज़र देखा। फिर अुनमेंसे अेक बहनने कहा: 'माताजी, आप अन्दर चलिये, और अिस मढ़ैयाको अेक निगाह देख लीजिये।'

बा अुस बहनके साथ अन्दर गअीं। झोंपड़ीवालीने कहा: 'माताजी, आप अिसे अच्छी तरह देख लीजिये। क्या अिसमें कहीं कपड़ोंसे भरी कोअी सन्दूक या आलमारी नज़र आती है? कुछ है ही नहीं! बदनपर पड़ी हुअी यह साड़ी ही सब कुछ है। अब बताअिये, अिसे कब धोअूँ? कब बदलूँ? कैसे बदलूँ? आप महात्माजीसे कहिये,

वे मेरे लिअे अेकाध साड़ी और भिजवा दें ! फिर मैं रोज़ नहाअूँगी, रोज़ धुला हुआ पहनूँगी और साफ़-सुथरी रहूँगी ।'

गांधीजीने देशकी ग़रीबीको कअी बार अपनी आँखों देखा था; लेकिन जब बाके मुँहसे यह दर्दभरा क़िस्सा सुना, तो अुन्हें अुस ग़रीबीकी गहराअीका ठीक-ठीक अन्दाज़ हो आया ।

यह ग़रीबी कैसे दूर हो ? अुस झोंपड़ीवालीको अेक साड़ी और दिला देनेसे ही सवाल हल नहीं हो जाता । अुसके जैसी तो देशमें अनगिनत हैं — लाखों, करोड़ों !

अिन सब मुसीबतोंका अेक ही अिलाज है — स्व-राज्य : अपना राज्य । जब गांधीजी स्वराज्यके लिअे सरकारसे जूझते हैं, तो अुनके दिलमें अिन्हीं करोड़ों झोंपड़ीवाली बहनोंकी याद बनी रहती है ।

अेक अरसा हुआ, गांधीजीने अैसा ही अेक जंग सरकारके साथ छेड़ा था। अुसका ख़ूब रंग जमा। लोगोंके जोशका ठिकाना न रहा। अिसी दरमियान अेक दिन अेक ख़ास घटना घट गअी । सरकारने गांधीजीके परम मित्र और साथी मौलाना महम्मदअलीको गिरफ़्तार कर लिया ।

आन-बानके अिस मौक़ेपर गांधीजीको अुन ग़रीब और गन्दगीमें रहनेवाली बहनोंकी याद फिर ताज़ा हो गअी ! अुन्होंने अुसी दम यह प्रतिज्ञा की — व्रत लिया : 'जब तक अिस देशमें स्वराज्यका सूरज नहीं अुगता, और मेरी भारतमाताकी देह पूरी तरह कपड़ोंसे नहीं ढँकती, मैं अपनी देहपर तीन-तीन कपड़े न लादूँगा । लाज ढँकनेको अेक लँगोटी-भर मेरे लिअे काफ़ी है ।'

और तबसे वे सिर्फ़ लँगोटी ही पहनते हैं ।

३१

रेल-घर : रेल-आश्रम

बड़ौदाके गायकवाड़ोंके झण्डेपर जीन-घर, जीन-तख्त लिखा रहता है। पुराने जमानेमें मराठा सरदारोंको अिस बातका बड़ा अभिमान था कि अुनके घोड़ोंपर रात-दिन काठी कसी रहती है।

यही हाल गांधीजीका रहा है। अुनका घर, अुनका आश्रम, जो कुछ कहो, रेलगाड़ीके तीसरे दर्जेका डब्बा है। देशके अिस कोनेसे अुस कोने तक अपना सन्देश सुनानेके लिअे अुन्हें बरसों लगातार घूमना पड़ा है। महीनों सफ़रमें रहना पड़ा है, और अिस हद तक रहना पड़ा है कि वे ज्यादा रेलमें रहे या आश्रममें, कहना मुश्किल है। अैसी हालतमें रेलगाड़ीके डब्बेको ही अुनका घर या आश्रम कहा जाय तो क्या बुराअी है?

और, गांधीजी भी गाड़ीके डब्बेको अपना घर समझते हैं। अुसपर सवार होकर घर ही की तरह सारा काम करते हैं। अुसमें बैठकर वे चर्खा चलाते हैं। सुबह-शामकी प्रार्थना करते हैं। पुस्तकें पढ़ते, चिट्ठी-पत्री लिखते और मिलने आनेवालोंसे मिलते-बोलते हैं।

गांधीजी हमेशा तीसरे दर्जेमें सफ़र करते हैं। बीमारी या कमज़ोरीकी वजहसे जब कभी अुन्हें अूँचे दर्जेमें सफ़र करना पड़ता, अुनका दिल बहुत दुखी रहा करता। मनमें रह-रहकर अेक ख़याल आता, जो अुन्हें बेचैन बना जाता : 'मैं अपनेको ग़रीबोंका सेवक मानता हूँ। वे तीसरे दर्जेकी परेशानियाँ अुठाते हैं, और मैं अुनसे अलग अूँचे दर्जेके गद्दोंपर आकर बैठता हूँ। क्या यह अुचित है? मुनासिब है?'

हमारे देशमें तीसरे दर्जेके मुसाफ़िरोंको जो मुसीबतें अुठानी पड़ती हैं, वे दुनियासे छिपी नहीं। लोगोंके साथ .खुद भी अुन्हीं मुसीबतोंका सामना करके गांधीजी खुश होते हैं। जब वे 'महात्मा' नहीं बने थे, और अितने मशहूर भी नहीं थे, अैसी परेशानियाँ अुन्होंने .खूब अुठाअी थीं, और बड़े शौक़से अुठाअी थीं। अक्सर अुन्हें मुसाफ़िरोंकी भीड़के बीच खड़ा रह जाना पड़ता; घण्टों खड़े-खड़े सफ़र करना पड़ता; कभी-कभी धक्के भी खाने पड़ते; अैसी हालतमें सोने या काम करनेकी सहूलियत तो अुन्हें कौन देने लगा?

अुन दिनों देशके बड़े-बड़े नेता भी आम रिआयासे दूर-दूर रहते और ग़रीबों या मैले-कुचैले लोगोंके साथ मिलनेमें शरम-सी महसूस करते। बड़े-बड़े सरकारी अफ़सरोंकी तरह वे भी रेलके पहले या दूसरे दर्जेमें ही सफ़र करते। शायद अिसीमें वे अपनी शान भी समझते थे। अैसे समय अकेले गांधीजीका तीसरे दर्जेमें सफ़र करना अेक अचरजकी बात थी। गांधीजी बैरिस्टर थे। दक्षिण अफ्रीकामें रह चुके थे और देशके नेता माने जाते थे।

अेक बार गांधीजी कलकत्तेमें स्वर्गीय श्री गोखलेजीके घर ठहरे थे। जब बिदा होने लगे, तो गोखलेजी अुन्हें स्टेशन तक पहुँचाने चले। गांधीजीने कहा: 'आप क्यों तकलीफ़ करते हैं? रहिये, मैं चला जाअूँगा।' गोखलेजी न माने। अुन्होंने जवाब दिया: 'अगर आप औरोंकी तरह अूँचे दर्जेमें सफ़र करते, तो मैं घर ही रहता; लेकिन आप तो तीसरे दर्जेमें बैठनेवाले हैं; अिसलिअे मैं समझता हूँ, मुझे आपके साथ स्टेशन चलना ही चाहिये।'

अुस ज़मानेमें गांधीजीकी अैसी क़द्र करनेवाले गोखलेजी-जैसे कुछ अिने-गिने लोग ही होते थे। आमतौर पर तो मज़ाक अुड़ानेवालोंकी तादाद ही ज़्यादा थी।

यों तीसरे दर्जेकी मुसीबतें अुठाते-अुठाते गांधीजीको अपने देशकी दीन-हीन जनताका .खूब अच्छा परिचय हो गया। अुसे नज़दीकसे देखने, अुसकी कमज़ोरियों, .खूबियों, ख़ासियतों और आदतोंको समझने, अुसकी रग-रगसे वाक़िफ़ होनेका अुन्हें बड़ा अच्छा मौक़ा मिला। अपने देशवासियोंकी नब्ज़को जितना गांधीजी पहचान पाये, अुतना शायद ही कोअी दूसरा नेता पहचान सका हो। अिसीलिअे आज वे देशके सच्चे हक़ीम बन सके हैं, और अुन्होंने जो नुसख़ा दिया है, वह अिस बीमार मुल्कके लिअे मुफ़ीद साबित हुआ है। यही वजह है कि आज छोटेसे लेकर बड़े तक सभी कोअी गांधीजीको बहुत गहरी अिज़्ज़त और श्रद्धाकी नजरसे देखते हैं।

३२

जेल-महल

जेलखानेको गांधीजी सिर्फ़ जेलखाना नहीं कहते, वे अुसे जेल-महल या जेल-मन्दिर कहते हैं।

जो जेलखानेसे डरते हैं, वे तो जेलखानेका नाम सुनते ही काँप अुठते हैं। अूँची-अूँची दीवारें, बड़े-बड़े दरवाज़े, काले-काले भयानक पहरेदार, हथकड़ियों और बेड़ियोंकी झनकार! तिसपर राक्षस-जैसी बड़ी-बड़ी चक्कियाँ चलाना, बैल बनकर चड़सका पानी खींचना और

कोल्हूमें बैलकी तरह जुतना। अिनमें ज़रा कहीं कसूर हो गया, चूक हो गअी, तो दारोग़ाके डण्डोंसे पिटना।

यह है जेलखानेकी तसवीर! अिन जेलखानोंमें अेक दफ़ा बन्द हो जानेके बाद फिर न तो बाहरकी दुनियाकी कोअी चीज़ देखनेको मिलती है, न बाहरका कुछ सुनाअी पड़ता है।

बड़े-बड़े चोर और लुटेरे भी क़ैदख़ानेके नामसे काँप अुठते हैं। लेकिन गांधीजीको वह ज़रा भी डरावना नहीं मालूम होता। वे अुसे महल समझते हैं। मन्दिर कहकर अुसकी महिमा बढ़ाते हैं। वे कअी दफ़ा अिस महलके मेहमान रह चुके हैं, और देशके सैकड़ों-हज़ारों सत्याग्रहियोंके लिअे अिस महलके दरवाज़े अुन्होंने खुले छुड़वा दिये हैं। लोग निधड़क अन्दर चले जाते हैं, और हँसते-हँसते वापस लौट आते हैं।

जो देशकी सेवाके लिअे जेल जाते हैं, वे भला जेलसे डरें क्यों? अुन्हें तो जेलखानेमें .खुशी ही होती है।

जेलमें अेक बार दाख़िल होनेके बाद फिर अिन्सानको कोअी फिकर ही नहीं रह जाती। खानेका वक़्त हुआ, खाना तैयार; पहननेको कपड़े चाहियें, कपड़े तैयार; दारोग़ा चौबीसों घण्टे आपकी ख़िदमतमें तैयार! हिफ़ाज़तके लिअे पहरेदार हाज़िर! सन्तरी रात और दिन संगीन लिये खड़ा पहरा देनेको हाज़िर!

दिनमें .खूब मेहनत करनी पड़ती है: रातमें खर्राटेकी मीठी नींद आती है।

अैसा सुख तो राजाको अपने राजमहलमें भी नसीब नहीं होता। अुस बेचारेको मारे फिकरके न खाना अच्छा लगता है, और न रात वह सुखकी नींद सो पाता है।

जब गांधीजी दक्षिण अफ्रीकामें थे, तो वे वहाँके जेलखानोंके भी मेहमान रह चुके थे। हिन्दुस्तान आनेके बाद यहाँ भी वे कअी बार जेल हो आये हैं। कभी साबरमतीके जेलखानेको महल बनाकर रहे, तो कभी पूनाके पास यरवड़ाको मन्दिर मानकर रहे।

जेलवाले बेचारे अुन्हें जेलमें रखते शरमाते हैं। मगर करें क्या, हुकुमके चाकर जो ठहरे!

३३

तीन प्रतिज्ञायें

मोहनदास अब बड़े हो चुके थे। मैट्रिक पास कर चुके थे।

मावजी दवेने कहा: 'मोहनदासको विलायत भेज दो। वह बैरिस्टर बनकर आयेगा, और अपने बापकी जगह सँभालेगा।'

पर विलायत जाना आसान न था। पिताजी राजके दिवान तो रह चुके थे, लेकिन पैसा कुछ छोड़ नहीं गये थे। राजकी तरफ़से मदद पानेकी कोशिश की, मगर अुसमें कामयाबी न मिली। बड़े भाअी दिलके फ़ैयाज़ थे। अुन्होंने किसी भी तरह रुपयोंका बन्दोबस्त करनेका बीड़ा अुठाया।

लेकिन विलायत जानेमें अेक और भी रुकावट थी। अुन दिनों समुद्रयात्रा करनेवालोंका धर्म नष्ट हो जाता था! जात-बिरादरीवाले अैसोंको अपने साथ बैठाते नहीं थे। यह अेक बड़ा बेंडा सवाल था।

माता पुतलीबाअीने कहा: 'नहीं, मेरा मोहन विलायत नहीं जायगा। विलायत जानेसे जात जाती है। शराब पीने, मांस खाने और

कुचाल चलनेका डर रहता है। विलायत जाना अपना काम नहीं।'

अिसपर जान-पहचानके अेक साधुने रास्ता सुझाते हुअे कहा: 'माअी, अगर मोहन प्रतिज्ञा कर ले और वहाँ जाकर अपनी मरजादसे रहे, तो क्या हर्ज है?'

माताजीने कहा: 'नहीं फिर तो कोअी हर्ज नहीं रहता।'

साधुने मोहनदाससे कहा: 'मोहन, बोलो, माताजीके सामने तीन प्रतिज्ञायें लेनी होंगी। लोगे?'

'कैसी प्रतिज्ञायें?'

'पहली, शराब नहीं पीयोगे। दूसरी, मांस नहीं खाओगे। तीसरी, पराअी औरतको माँ-बहन समझोगे। बोलो, मंजूर हैं, ये तीन बातें?'

'जी हाँ, मंजूर हैं, दिलसे मंजूर हैं।'

'तो फिर आ जाओ सामने, और माँके चरण छूकर कहो।'

गांधीजीने माताजीके चरणोंमें झुकते हुअे कहा: 'माताजी, मैं शराब नहीं पीयूँगा; मांस नहीं खाअूँगा, पराअी स्त्रीको माँ-बहनके समान समझूँगा।'

गांधीजीके जीवनमें प्रतिज्ञाओं या व्रतोंका बड़ा महत्त्व रहा है। वे बचपनसे अिनमें मानते आये हैं। अुनका विश्वास है कि कमजोरीकी घड़ियोंमें ये प्रतिज्ञायें ही मनुष्यको गिरनेसे बचाती हैं, और अुसे मुक़ामसे हटने नहीं देतीं।

कहा जो है:

चन्द टरै, सूरज टरै, टरै जगत व्यवहार।
पै दृढ़ श्री हरिचन्द कौ, टरै न सत्य विचार॥

३४

'कुली' बैरिस्टर

गांधीजी विलायत गये। बैरिस्टर बने। वापस हिन्दुस्तान आये और हिन्दुस्तानसे धन कमाने दक्षिण अफ्रीका गये। गांधीजीको अपनी जान-पहचानके अेक मेमन व्यापारीके यहाँ काम मिला, और वे अुस व्यापारीके नौकर बनकर वहाँ पहुँचे।

वह अेक बिलकुल अनजान देश था। गांधीजी वहाँ धन कमाने गये थे। लेकिन दरअसल जो चीज़ अुन्होंने वहाँ कमाअी, अुसका तो शायद किसीने सपना भी नहीं देखा था। वह अेक अजीब चीज़ थी, और अजीब ढंगसे कमाअी गअी थी।

अफ्रीकाकी ज़मीनपर क़दम रखते ही न जाने क्यों वहाँकी आबोहवामें गांधीजीका दम घुटने-सा लगा। वहाँ क़दम-क़दमपर हिन्दुस्तानियोंको बेअिज़्ज़त होना पड़ता था। अिसमें छोटे-बड़े या अमीर-ग़रीबका कोअी भेद न था।

बहुतेरे हिन्दुस्तानी अुस मुल्कमें मज़दूर या कुलीके नाते गये थे, अिसलिअे वहाँके गोरे लोग अुनसे नफ़रत करते और अुन्हें 'कुली' कहते थे। वहाँ जाकर हिन्दुस्तानी व्यापारी 'कुली व्यापारी', हिन्दुस्तानी वकील 'कुली वकील', और हिन्दुस्तानी बैरिस्टर 'कुली बैरिस्टर' कहलाता था। गांधीजी भी 'कुली बैरिस्टर' कहलाये।

वहाँके गोरे हिन्दुस्तानियोंको अपनेसे हलका मानते और अुनसे मिलना-जुलना अपनी शानके ख़िलाफ़ समझते थे। वे हिन्दुस्तानियोंको अपने साथ अुठने-बैठने भी न देते। विक्टोरियामें, ट्राममें, रेलगाड़ीमें

और होटलोंमें, कहीं कोअी हिन्दुस्तानी अुनके साथ बैठ नहीं सकता था। किसी हिन्दुस्तानी 'कुली' को अपने साथ रास्तेमें पैदल चलते देखकर भी वे आग-भभूका हो जाते थे। जहाँ अितनी नफ़रत थी, वहाँ हिन्दुस्तानियोंको किसी अुत्सव या जलसेमें बुलानेकी या अुनकी आवभगत करनेकी तो बात ही क्या ?

पढ़े-लिखे और धनवान हिन्दुस्तानी भी अिन अपमानोंको सहनेके आदी हो चुके थे। परदेशमें मान-अपमानका ख़याल न कर चुपचाप धन कमाने और देशमें जाकर अिज़्ज़तदार कहलानेका रास्ता सब अख्तियार कर चुके थे।

लेकिन गांधीजी अिसे बरदाश्त न कर सके! जाते ही पग-पगपर अुनका अपमान होने लगा। दूसरे हिन्दुस्तानियोंकी तरह वे अिन अपमानोंको सह न सके। अुन्होंने विरोध शुरू किया, और सर अुठाकर, सीना तानकर चलने लगे। बदलेमें अुनको गालियाँ, धक्के, और लातें मिलीं। गांधीजीने गालीका जवाब गालीसे, धक्केका धक्केसे, और लातका लातसे देना मुनासिब न समझा। वे अपमानोंसे डरे नहीं, और डरानेवालोंके सामने झुके नहीं।

अेक दिन बैरिस्टर गांधी अपने किसी मित्रके साथ डरबन गये। डरबन अफ्रीकाका अेक शहर है। मित्रने अुन्हें वहाँकी अदालत दिखाअी।

अुन दिनों गांधीजी निहायत टीमटामसे रहते, और बड़े शौक़से अंग्रेजी पोशाक पहनते थे; लेकिन माथेपर तब भी वे हिन्दुस्तानी पगड़ी ही रखते थे। डरबनकी अदालतमें भी वे अुस दिन वैसी ही पगड़ी पहनकर गये और वकीलोंके साथ बैठे।

जज साहबको अिस नअी सूरतके रंगढंगपर अचरज हुआ। अुन्होंने घूरकर गांधीजीको देखा और सोचा: 'यह कुली बैरिस्टर माथेपर पगड़ी पहने बैठा है, और अदालतका अपमान कर रहा है।'

कुछ देर तक घूरनेके बाद अुन्होंने गांधीजीसे कहा: 'अपनी पगड़ी अुतार दीजिये।'

गांधीजी अिस अपमानको सह न सके। तिलमिला अुठे। अुन्होंने सोचा: 'पगड़ी अुतारनेसे बेहतर है, सिर अुतारकर दे देना।'

गांधीजीने पगड़ी अुतारनेसे अिनकार कर दिया। वे अदालतका दीवानखाना छोड़कर बाहर चले गये।

३५

हाथ पकड़कर अुतारा

गांधीजीको डरबनसे प्रिटोरिया जाना था। अुन्होंने पहले दर्जेका टिकट कटाया और रेलपर सवार हुअे।

जब घरसे चलने लगे, तो लोगोंने समझाया और कहा: 'देखिये गांधीजी, यह हिन्दुस्तान नहीं है। यहाँ हम लोगोंको कोअी पहले दर्जेमें बैठने नहीं देता। हम कहते हैं: 'ख़बरदार! आगे आप जानिये।'

गांधीजीने किसीकी सुनी नहीं। अुन दिनों वे मानते थे कि बैरिस्टरीकी शान बनाये रखनेके लिअे पहले दर्जेमें बैठना जरूरी है।

कुछ दूर तक किसीने कोअी छेड़छाड़ न की। रातको क़रीब नौ बजे गाड़ी मैरित्सबर्ग नामके स्टेशनपर खड़ी हुअी। यहींसे अेक गोरा मुसाफ़िर गांधीजीके डब्बेमें बैठा।

मगर वह बैठे क्योंकर ? बैठते ही वह तो चकरा गया। अुसने देखा, ग़ज़ब हो गया : पहले दर्जेमें और कुली !

गोरा मुँहसे कुछ न बोला। फ़ौरन अुतरकर नीचे गया और स्टेशनके अेक-दो अफ़सरोंको बुला लाया। अफ़सर आये, टुकर-मुकर देखा किये, मगर हिम्मत न हो कि कुछ कहें। आख़िर अेक अफ़सरने गांधीजीके पास जाकर कहा — ‘सामी ! ज़रा सुनो, तुम्हें आख़िरी डब्बेमें जाना होगा।’ गांधीजीने कहा — ‘मेरे पास पहले दर्जेका टिकट जो है।’

‘कोअी हर्ज नहीं, टिकट रहने दो। मगर मैं कहता हूँ कि तुम्हें आख़िरी डब्बेमें जाना होगा।’

‘मैं भी कहता हूँ कि मैं डरबनसे अिसी डब्बेमें बैठाया गया हूँ, और अिसीमें जानेवाला हूँ।’

जवाब सुनकर अफ़सर तो दंग रह गया ! ‘अेक गोरे अफ़सरकी शानमें अेक कुलीकी यह हिम्मत ?’ अफ़सरने रोब गाँठते हुअे कहा : ‘हरगिज़ नहीं ! तुम्हें अुतरना ही होगा; नहीं, सिपाही आकर तुम्हें अुतार देगा।’

गांधीजीने भी साफ़ कह दिया : ‘अच्छी बात है, आने दीजिये सिपाहीको। मैं अपनी मरज़ीसे नहीं अुतरूँगा।’

अफ़सर चिल्लाता हुआ गया और सिपाहीको बुला लाया। आते ही सिपाही डब्बेमें घुसा, हाथ पकड़कर गांधीजीको धकेला, नीचे अुतारा, और सामान अुठाकर बाहर फेंक दिया।

गांधीजी अिस समय आपेमें न थे। वे सिरसे पैर तक हिल अुठे थे। .खून खौल रहा था। वे न तो दूसरे डब्बेमें गये, न अुन्होंने सामान ही छुआ। प्लैटफार्मपर खड़े रहे, सो खड़े ही रहे, और गाड़ी चल दी।

सारी रात प्लैटफार्मपर पड़े रहे। कड़ाकेकी सर्दी थी। साथमें ओवरकोट था। लेकिन फेंके हुअे सामानको आँख अुठाकर देखनेका भी दिल न होता था। कहीं सामान लेने बढ़े और फिर बेअिज्जती हुअी तो? बस, सारी रात ठण्डमें ठिठुरा किये, मगर सामानको हाथ न लगाया।

जाड़ा खाते-खाते दिलमें कअी तरहके खयाल आये और चले गये।

'रेलमें बैठकर आगे जाने और फिर बेअिज्जत होनेसे फ़ायदा क्या? बेहतर तो यह है कि वापस लौट जाअूँ।'

'नहीं, नहीं, यह कैसे हो सकता है? जिसका बीड़ा अुठाया, अुसे अधबीचमें कैसे छोड़ा जा सकता है?'

'अिस देशमें रहकर धन कमानेसे फ़ायदा क्या? बेहतर है कि हिन्दुस्तान वापस चला जाअूँ।'

'नहीं, नहीं, यह कैसे हो सकता है? यह तो डरपोकोंका काम है। क्या तू डरपोक है?'

'तो क्यों न गोरे सिपाही और गोरे अफ़सरपर मुक़दमा चलाअूँ, और यों दोनोंको अुनकी हिमाक़तका सबक़ सिखाअूँ?'

'फ़ज़ूलकी बात है। अिससे होगा क्या? यहाँके तमाम हिन्दुस्तानियोंके सर 'कुलीपन' का जो कलंक लगा हुआ है, क्या वह अिससे धुलेगा?'

अिस तरह सोचते-सोचते गांधीजीने अपने मनको समझा लिया और अपमानकी अिस कड़वी घूँटको पीकर रह गये।

३६

शिकरमकी बीती

प्रिटोरियाका रास्ता मुसीबतोंका रास्ता साबित हुआ। अेकका किस्सा सुन चुके। दूसरीका सुनिये। अुन दिनों चार्ल्सटाअुनसे जोहानिसबर्ग तक रेल न थी। शिकरम चलती थी।

गांधीजीने शिकरमके लिअे बाक़ायदा टिकट ख़रीदा। पर ज्यों ही शिकरमपर सवार होने चले, गोरे शिकरमवालेने रोका। बोला: 'सामी! तुम्हें नहीं बैठायेंगे। तुम्हारा टिकट पुराना है। कलका है।'

अुसने सोचा: 'परदेशी आदमी है, अजनबी है, बहानेसे काम चलता हो तो क्यों न चला लूँ?' मगर दरअसल अुसकी नीयत कुछ और ही थी। वह नहीं चाहता था कि अपनी शिकरममें गोरे मुसाफ़िरोंके साथ काले कुलीको बैठावे।

लेकिन यह झाँसेबाजी क्योंकर चले? आख़िर शिकरमके अन्दर गोरोंके साथ तो नहीं, बाहर कोचवानकी बराबरीसे गांधीजी बैठाये गये। गांधीजी बहुत सिटपिटाये — मनमें अुथल-पुथल मच गअी: 'मैं यहाँ क्यों बैठूँ? मुझे अन्दर क्यों नहीं बैठाया जाता?'

लेकिन अिस अपमानको भी वे पी गये और बाहर कोचवानके पास जा बैठे।

कुछ ही दूर गये थे कि मुसीबत शुरू हुअी। शिकरमका गोरा मालिक साथमें था। अुसकी अिच्छा हुअी कि वह बाहर बैठे और बीड़ी पीये। शायद हवा खानेका भी दिल रहा हो। लेकिन बाहर तो गांधीजी बैठे थे। गोरेने, अपनी जान, अिसका भी रास्ता निकाल

लिया। कोचवानके पास टाटका अेक गन्दा-सा टुकड़ा पड़ा था। गोरेने अुसे लेकर पैर रखनेके पटियेपर फैला दिया और गांधीजीसे बोला: 'अे सामी, तू यहाँ बैठ! मैं कोचवानकी बराबरीसे बैठूँगा।'

सुनते ही गांधीजी तिलमिला अुठे। सामने पहाड़-सा अूँचा-पूरा और मज़बूत गोरा था, और मुक़ाबलेमें दुबले-पतले और अकेले गांधीजी थे। मामला टेढ़ा था, मगर गांधीजी डरे नहीं। क्या डरकर अपमान सह लेते?

गांधीजीने साफ़ कह दिया: 'देखिये, आपकी पहली ग़लती तो यह है कि आपने मुझे यहाँ बैठाया। मैंने भी जिद नहीं की, बैठ गया। अब आप बाहर बैठना चाहते हैं, आपको बीड़ी पीनी है। बैठिये, पीजिये! मगर मुझसे क्यों कहते हैं कि मैं आपके पैरोंमें बैठूँ? मैं अन्दर शिकरममें जानेको तैयार हूँ। आपके पैरों तले हरगिज़ न बैठूँगा।'

गांधीजी अभी अपनी बात भी पूरी नहीं कर पाये थे, कि गोरा भिन्ना अुठा! अुसने तड़ातड़ तमाचे जड़ने शुरू कर दिये, और हाथ पकड़कर अुन्हें नीचे घसीटने लगा। गांधीजीने बैठकके पास लगे हुअे पीतलके सीखचोंको कटकटाकर पकड़ लिया और मनमें तय कर लिया कि चाहे हाथ अुखड़ जायँ, पर सलाअियाँ नहीं छोड़ूँगा।

गोरा गालियाँ दे रहा था; घसीट रहा था; और गांधीजी सीखचोंको पकड़े अड़े थे। न कुछ बोले, न अपनी जगह छोड़ी। दूसरे गोरे मुसाफ़िरोंने जब देखा कि मामला बढ़ रहा है, तो बाहर आये, बीच-बचाव किया, शिकरमवालेको बुरा-भला कहा और गांधीजीको छुड़ाया।

३७

धक्का

प्रिटोरियामें गांधीजी रोज शामको घरसे हवाखोरीके लिअे निकलते और खुले मैदानमें टहलकर लौट आते।

सड़कके किनारे, दोनों ओर, पैदल चलनेवालोंके लिअे पक्का रास्ता बना था। गांधीजी अिसी रास्ते रोज आते जाते थे। अिसी रास्ते पर प्रिटोरियाके प्रधान मंत्री मिस्टर क्रूगरका मकान था। अेक मामूली-सा सीधा-सादा मकान; मगर दरवाजेपर सन्तरीका पहरा था; अिसीसे लोग समझते थे कि किसी आला अफ़सरका मकान है।

गांधीजी हमेशा अिसी रास्ते जाते थे; हमेशा प्रधान मंत्री मिस्टर क्रूगरके घरके सामनेसे गुजरते थे। सन्तरी हमेशा अुन्हें देखता था, लेकिन कभी कोअी कुछ कहता न था।

अुस दिन पता नहीं, क्या हुआ: शायद सन्तरी बदला था। नये सन्तरीने सोचा: 'अरे, यह काला कुली, पटरीपर चलता है? और सो भी प्रधान मंत्रीके घरके सामने? वाह रे हिमाक़त! बच्चाको मजा चखाना चाहिये!'

अुसने आव देखा न ताव; न बोला न चाला, न चेताया; बस अेकाअेक आगे बढ़कर गांधीजीको अेक धक्का दिया, लात मारी और प्लैटफ़ार्मसे नीचे गिरा दिया।

गांधीजी चौंक पड़े। यह कैसा गजब है? कैसा सितम? खड़े होकर सिपाहीसे जवाब तलब करने ही वाले थे, कि सामनेसे अेक

घुड़सवार आया और बोला: 'मिस्टर गांधी, मैंने सारी हरक़त अपनी आँखों देखी है। तुम अिसपर मुक़दमा चलाओ, मैं गवाही दूँगा।'

यह घुड़सवार अेक गोरा था और गांधीजीका दोस्त था।

गांधीजीने कहा: 'नहीं, अिसमें मुक़दमेकी क्या ज़रूरत है। यह जैसा हज़ारों हिन्दुस्तानियोंके साथ पेश आता है, वैसे ही मेरे साथ भी आया। बेचारा क्या करे?'

दोस्तने कहा: 'नहीं, यह ठीक नहीं है; अैसोंको दुरुस्त करना ही चाहिये।'

गांधीजीने समझाते हुअे कहा: 'भाअी, जहाँ सभी गोरे हमें 'कुली' समझते और हमसे नफ़रत करते हैं, तहाँ अिस बेचारे नासमझ सिपाहीका क्या कसूर?'

फिर तो अुस गोरे मित्रने सिपाहीको सारी हक़ीक़त समझाअी। बेचारा बहुत सिटपिटाया और आकर गांधीजीसे माफ़ी माँगने लगा।

३८

भाअीने पीट दिया

दक्षिण अफ्रीकामें मीर आलम नामका अेक पठान रहता था। तोशक-तकिये, गादी-गद्दे भरकर बेचना अुसका पेशा था। अुसीसे अुसका गुज़र-बसर होता था।

मीर आलमकी गांधीजीसे अच्छी जान-पहचान थी। आफ़त-मुसीबतमें, काम-काजमें वह हमेशा गांधीजीकी सलाहसे चलता, और अुनकी अिज़्ज़त करता। जब गांधीजीने दक्षिण अफ्रीकामें सत्याग्रह शुरू किया, तो मीर आलम भी अुसमें शामिल हुआ — दिलचस्पी लेने लगा।

सत्याग्रहके सिलसिलेमें गांधीजीको जेल जाना पड़ा । बहुत-से दूसरे हिन्दुस्तानियोंने भी बड़ी बहादुरी दिखाअी और खुशी-खुशी जेल गये । आखिर सरकार झुकी और समझौता हुआ । कुछ लोगोंको यह समझौता पसन्द नहीं आया । मीर आलम अुन्हींमें था । वह गांधीजीपर बहुत गुस्सा हुआ ।

अफ्रीकामें अुन दिनों अेक बहुत ही खराब और अपमानजनक क़ानून बना था । अिस क़ानूनके अनुसार वहाँके सभी हिन्दुस्तानियोंको सरकारी परवाने लेने पड़ते थे और अुन परवानोंपर अपनी दसों अँगुलियोंकी छाप देनी पड़ती थी । वे परवाने हरअेकको रात-दिन अपने पास रखने पड़ते थे । जिसके पास परवाना न होता, अुसे सज़ा ठुक जाती । अैसा मनहूस यह क़ानून था । हिन्दुस्तानियोंने अिसी क़ानूनके खिलाफ़ सत्याग्रह छेड़ा था । समझौतेमें यह तय पाया कि जो चाहे परवाने ले; न चाहे, न ले ।

सत्याग्रहकी जीत हुअी । सरकारने गांधीजीको जेलसे रिहा कर दिया । दूसरे सब सत्याग्रही भी छोड़ दिये गये । अिसके बाद अिस जीतकी खुशीमें अेक जल्सा हुआ ।

जल्सेमें मीर आलम भी मौजूद था । अुसने खड़े होकर पूछा : ‘ अिसमें हमारी जीत क्या हुअी ? परवाना लेनेकी बात तो क़ायम ही रही न ? ’

गांधीजीने समझाते हुअे कहा : ‘ जो न लेना चाहे, न ले : अितनी आज़ादी अिसमें रक्खी गअी है । आप चाहें, न लें । ’

‘ और आप ? ’

‘ मैं तो सबसे पहले लूँगा और दसों अँगुलियोंकी छाप भी दूँगा । ’

'लोगोंको शक़ है कि आप सरकारसे पैसा खा गये हैं। आपने रिश्वत ली है।'

'मैं कहता हूँ, यह ग़लत है। अिसे कोअी न माने।'

'अच्छी बात है; बन्दा भी .खुदाकी क़सम खाकर कहता है कि जो अव्वल परवाना लेने जायगा, वह मेरे हाथों मौत पायगा।'

गांधीजीने कहा: 'अपने भाअीके हाथों मरनेमें मुझे खुशी ही होगी। मगर मैं सचाअीसे हरगिज़ न हटूँगा।

अिसके कोअी तीन महिने बादका किस्सा है। परवाना लेनेकी तारीख़ नज़दीक आ लगी। गांधीजी और दूसरे साथी नेताओंने यह तय कर लिया था कि वे सबसे पहले परवाने लेने जायँगे।

मीर आलम भी अपनी बात भूला न था। गुस्सेसे बेताब होकर वह मनही मन बोल अुठा: 'देखूँगा, वे कैसे परवाने लेते हैं।' अिसके बाद अपने दो-तीन पठान दोस्तोंको साथ लेकर वह अेक जगह रास्ता रोककर खड़ा हो गया।

गांधीजी अुधरसे गुज़रे। मीर आलमका दस्तूर था कि जब कभी गांधीजीसे मिलता, बड़े अदबके साथ अुन्हें सलाम करता। अुसके दिलमें अुनके लिअे बड़ी अिज़्ज़त थी। लेकिन आज वह फिरण्ट रहा। सलाम नहीं किया। गांधीजीने अुसकी आँखोंको देखा, तो ताड़ गये कि .खून सवार है; ज़रूर कोअी अनहोनी होगी।

जब पठान चुप रहा, तो गांधीजीने .खुद मुसकराते हुअे पूछा: 'कहो भाअी मीर आलम, कैसे हो?' अुसने अुसी तावमें सर झुकाते हुअे कहा: 'अच्छा हूँ।'

समय होते ही गांधीजीका दल परवाना लेने चला। मीर आलम भी अपने दोस्तोंके साथ अुनके पीछे हो लिया। जब आफिस कुछ ही दूर रह गया, तो मीर आलम लपककर गांधीजीके सामने जा पहुँचा और बोला : 'कहाँ जाते हो ?'

'दसों अँगुलियोंकी छाप देने और परवाना लेने। चाहो, तुम भी चलो। तुम्हें अँगुलियोंकी छाप न देनी होगी।'

अिसी वक़्त पीछेसे किसीने कसकर लाठी तौली और वह खटाक् गांधीजीकी खोपड़ीपर आकर गिरी! पहले ही वार में गांधीजी गश खा गये, और ज़मीनपर गिर पड़े। बेहोशीकी हालतमें भी पठान अुन्हें डण्डों और लातोंसे मारते रहे। गांधीजीके साथ जो दूसरे नेता थे, अुन्होंने बीचबचावकी जो कोशिश की, तो वे भी बेतरह पिटे!

यों मार-पीटकर पठानोंने रास्ता नापा, लेकिन राहगीरोंने अुन्हें पकड़ लिया और पुलिसमें दे दिया।

बेहोशीकी हालतमें लोग गांधीजीको अुठाकर पासके अेक मकानमें ले गये। वहाँ वे सुलाये गये और अुनकी मरहम-पट्टी हुअी। अुनका अेक होंठ फट गया था, दाँतमें चोट पहुँची थी और पसलियोंमें दर्द हो रहा था।

कुछ देर बाद जब होश आया तो जानते हो, पहला सवाल गांधीजीने क्या पूछा ?

'मीर आलम कहाँ है ?'

अेक सेवकने कहा : 'आप आराम कीजिये। मीर आलमको और अुसके साथियोंको पुलिस पकड़कर ले गअी है।'

गांधीजी चौंक पड़े। अुन्होंने कहा : 'नहीं, नहीं, अुन लोगोंको तुरन्त छुड़ाना चाहिये।' और अुन्होंने अुसी दम पुलिस अफ़सरको अेक चिट्ठी लिखी और अुनसे प्रार्थना की कि वे अुन पठान भाअियोंको छोड़ दें। गांधीजी नहीं चाहते थे कि अुन्हें सज़ा हो।

गांधीजीकी चिट्ठी पाकर पुलिस अफ़सरने मीर आलमको और अुसके साथियोंको रिहा कर दिया। लेकिन बादमें जब वहाँके गोरोंने हायतोबा मचाअी, तो पुलिसने अुन्हें फिर गिरफ़्तार कर लिया और छः महीनोंकी सज़ा ठोंक दी।

अिसी मार-पीटमें गांधीजीके अगले दाँत गये। वह गड्ढा आज भी अुनके मुँहकी शोभा बढ़ा रहा है। भाअीका दिया हुआ, प्रेमसे सहा हुआ, और सत्यकी रक्षामें मिला हुआ वह अेक अुपहार है — तोहफ़ा है।

३९

मीर आलम मुरीद बना

अब आगेका मज़ेदार क़िस्सा सुनिये।

दक्षिण अफ्रीकाकी सरकार अपनी बातपर क़ायम न रही। बस, गांधीजीने फिरसे लड़ाअी छेड़ दी।

लोगोंसे कहा गया कि सरकारने धोखा दिया है। हमें फिरसे सत्याग्रह करना है। जो परवाने हमने अपनी राज़ी-ख़ुशीसे लिये हैं, अुनको अिकट्ठा करके जला देना है। जिन्हें लड़ाअीमें शामिल होना हो, वे अपने-अपने परवाने लौटा दें।

लोग मारे .खुशीके पागल-पागल हो गये। गांधीजीके दफ़्तरमें परवानोंकी झड़ी लग गअी।

परवानोंकी होली जलानेका दिन तय हुआ। अुस दिन अेक बड़ी भारी आम सभा हुअी। सभाके बीचोंबीच परवानोंका ढेर रचा गया।

गांधीजीने पूछा : 'भाअियो! साफ़-साफ़ कहना, आपने अपनी राज़ी-ख़ुशीसे ये परवाने जलानेको दिये हैं न?'

हज़ारों अेक साथ बोल अुठे : 'जी हाँ, राज़ी-ख़ुशीसे दिये हैं।'

'अब भी वक़्त है, जो चाहें, अपना परवाना वापस ले सकते हैं।'

'नहीं, नहीं, हम वापस नहीं लेंगे।'

'देखिये, ख़बरदार! लड़ाअी ज़ोरकी ठनेगी, जेल जाना होगा।'

'परवा नहीं, जेल जायँगे! आप अिनमें आग लगा दीजिये।'

अितनेमें सभाके बीच अेक पठान खड़ा हुआ और बोला :

'गांधी भाअी, लो, यह मेरा परवाना भी लो, और जला दो। मैं तुम्हारा गुनहगार हूँ। मुझे माफ़ करो। मैंने तुम्हें पहचाना न था। तुम सच्चे बहादुर हो।'

यह पठान और कोअी नहीं, हमारा मीर आलम ही था।

भरी सभामें गांधीजीने अुससे हाथ मिलाया। सारी सभा तालियोंकी गड़गड़ाहटसे गूँज अुठी। गांधीजीने परवानोंपर किरासिन छिड़का और आग जला दी। होली धधक अुठी।

बस, मीर आलम अुसी दिनसे गांधीजीका भक्त (मुरीद) बन गया, और अुनके न चाहते हुअे भी, रात-दिन परछाअींकी तरह अुनके साथ रहने लगा। वह डरता था कि कहीं कोअी गांधीजीको सताये न!

४०

जबर्दस्त तूफ़ान

गांधीजी अफ्रीकासे हिन्दुस्तान आये। कुछ दिन यहाँ रहे, और वापस दक्षिण अफ्रीका जानेके लिअे जहाज़पर सवार हुअे। यह अुनकी दूसरी यात्रा थी। अिस बार श्रीमती कस्तूरबा और बच्चे भी अुनके साथ थे। रास्तेमें जहाज़ अेक तूफ़ानसे घिर गया। ज़ोरोंका तूफ़ान था। मुसाफ़िर डर गये। खाना-पीना हराम हो गया। अुल्टियों और अुछाटोंके मारे लोग दिक़ आ गये। अैसे समय गांधीजीने सबकी सेवा की। सबको ढारस बँधाया। लेकिन सच्चा तूफ़ान तो डरबनमें आनेवाला था।

डरबनके गोरोंको ख़बर मिल चुकी थी कि गांधी वापस आ रहा है। सब आग-भभूका हो अुठे। बोले: 'फिर वह हमारे देशमें आ रहा है? अुसीने न हिन्दुस्तान जाकर हमारी शिकायत की? वही न हमें सारी दुनियामें बदनाम कर रहा है? बस, निकाल बाहर करो अुसे। मजाल है, जो यहाँ क़दम रक्खे।'

कुछ लोगोंने कहा: 'यह गांधी बहुत ही बदमिज़ाज है; बड़ा मक्कार है; नाकों दम कर रक्खा है अिसने। किसीको सुखसे रहने ही नहीं देता। बस, हर बातमें 'कुलियों'को हमारे ख़िलाफ़ भड़काता रहता है। क़सम खाओ कि अुसे अपनी ज़मीनपर पैर न रखने देंगे।'

दूसरोंने गरज कर कहा: 'और अबकी तो वह अपने बीवी-बच्चोंको लेकर आ रहा है। मानो, यहीं अड्डा जमाना चाहता है। हम भी देखेंगे, कि बचा कैसे आते हैं और कैसे बसते हैं।'

तीसरे दलने चिल्लाकर कहा : 'कुछ खबर भी है, यारो ! अबकी वह अकेला नहीं आ रहा; दो जहाज़ भरकर 'कुलियों'को अपने साथ ला रहा है।

'लावे बलासे; लेकिन अुसे यहाँ अुतरने कौन देगा ?'

'चलो, सरकारसे कहा जाय, मनाही-हुक्म जारी कर दे।'

'और अगर सरकार न सुने, तो हमीं गांधीको अुठाकर सागरमें फेंक दें।'

डरबनके गोरोंने सच-झूठ बहुत-कुछ सुन रक्खा था। अिसीलिअे वे अितने भिन्ना रहे थे।

अिधर गांधीजीको गोरोंके अिस ग़ुस्सेका कोअी पता ही न था। अुनका जहाज़ डरबनके बन्दरगाहमें आ लगा।

बन्दरगाहके असफ़रोंने देखते ही मनाही कर दी। कहला दिया :

'दूर रहो! अपना जहाज़ यहाँ न लगाओ। यहाँ अुतरनेकी मनाही है। तुम्हारे देशमें प्लेग फैला है। तुम्हें 'क्वारण्टीन' में रहना पड़ेगा।'

'लेकिन हमारे जहाज़में कोअी बीमार नहीं है।'

'भले न हो! क्वारण्टीनमें तो रहना ही होगा।'

'कै दिन रहना होगा ?'

'२३ दिन।'

गांधीजीको अचम्भा हुआ। ये बन्दरगाहवाले अितना कड़ा रुख क्यों दिखा रहे हैं ? धीमे-धीमे डरबनकी बातें कानपर आती गअीं, और भेद खुलता गया।

कुछ लोग जहाज़के मुसाफ़िरोंको डराने लगे: 'अरे भाअी, लौट जाओ ! नहीं, समन्दरमें डुबो दिये जाओगे। '

कुछने जहाज़के मालिकको डाँटना शुरू किया: 'अपना जहाज़ वापस हिन्दुस्तान ले जा। वरना बरबाद हो जायगा।'

लेकिन धन्य है अुनको कि अुनमेंसे न तो कोअी डरा, और न कोअी डिगा।

२३ दिन तक सब समुद्रकी हवा खाते रहे, और बड़े मज़ेसे जहाज़में ये दिन गुज़ार दिये। आख़िर क्वारण्टीनसे छुटकारा मिला। सभी हँसते-खेलते हिम्मतके साथ डरबनके बन्दरपर अुतरे। गोरे मुँह ताकते रह गये।

अितनेमें अेक अफ़सरका सँदेशा आया: 'गांधीजीसे कह दो, दिनमें जहाज़से न अुतरें; नहीं, जानका ख़तरा है। '

अिसपर अेक मित्रने पूछा: 'कहिये, क्या अिरादा है? आपको डर तो नहीं लगता न?'

'नहीं, डरकी क्या बात है?'

'तो फिर आअिये, दिन-दहाड़े चलें। मैं आपके साथ हूँ। क्या हम चोर हैं, जो अँधेरेमें जायँ?'

गांधीजीने अपने परिवारके लोगोंको अेक गाड़ीमें बैठाया; शहरकी तरफ़ रवाना किया; और .ख़ुद अपने दोस्तके साथ पैदल डरबनकी ओर चले।

दोनों दोस्त शहरमें दाखिल हुअे। कुछ दूर तक तो किसीने गांधीजीको पहचाना ही नहीं बादमें कुछ गोरे छोकरोंने, जो अुधरसे

जा रहे थे, गांधीजीको देख लिया। अुस देशमें वैसी पगड़ी पहननेवाले गांधीजी अकेले ही थे, असलिअे फ़ौरन पहचान लिये गये।

अुन्हें देखते ही छोकरोंने शोर मचाना शुरू कर दिया :

गांधी है! गांधी है!

मारो! मारो!

पकड़ो! पकड़ो!'

शुरू-शुरूमें लौंडे चिल्लाते रहे। फिर कंकर फेंकने लगे। अितनेमें बच्चोंके साथ बड़े-बूढ़े भी शामिल हो गये।

मित्रने गांधीजीसे कहा : 'जानका ख़तरा है। जल्दी भाग निकलना चाहिये। चलिये, रिक्शामें बैठ चलें।'

गांधीजीने चौंककर पूछा : 'रिक्शामें? भाअी, रिक्शा तो आदमी चलाता है। मुझे वह पसन्द नहीं। मैं नहीं बैठूँगा।'

'अजी साहब, बैठ चलिये! पसन्दकी अेक ही कही। यहाँ जानके लाले पड़े हैं, आफ़तके बादल सरपर मँडरा रहे हैं, और आप पसन्दकी चर्चा चला रहे हैं।'

दोस्तने रिक्शावालेको आवाज़ दी। रिक्शा आअी। गांधीजी अपने मनको समझाकर अुसपर सवार होना ही चाहते थे कि अितनेमें लोगोंकी अुस टोलीने रिक्शावालेको घेर लिया।

डपटकर बोले : 'खबरदार! भूलकर भी अिन्हें न बैठाना। नहीं, रिक्शा तोड़ डालेंगे। सर फोड़ डालेंगे।'

बेचारा हबशी! अुसकी हिम्मत ही कितनी? डर गया। 'खा' (ना) कहकर लौट पड़ा। जान लेकर भागा।

अब कोअी चारा न रहा। आगे गांधीजी थे। पीछे लोगोंकी भीड़ थी। जैसे बढ़ते गये, भीड़ भी दुगुनी-चौगुनी होती गअी। आगे गांधीजी चल रहे थे, पीछे गोरोंका अेक जंगी जुलूस आ रहा था।

शरारतियोंकी अुस भीड़मेंसे अेक मोटा-ताज़ा गोरा सामने आया। अुसने गांधीजीके साथीको अपनी बगलमें दबाया, और अुन्हें लेकर अेक ओर हट गया।

अब मैदान साफ़ था। गांधीजी अकेले पड़ गये थे। लोगोंने अुनपर गालियोंकी बौछार और पत्थरोंकी मार शुरू कर दी। अेक हज़रत जो आगे बढ़े, तो गांधीजीकी पगड़ी अुछालकर चलते बने। अेक दूसरे मुस्टण्डे गोरेने दो चपतें रसीद कीं, और लात मारकर छू हुआ।

अकेले गांधीजी क्या करते? चक्कर खाकर गिरने ही वाले थे कि पासके अेक घरकी जाफ़री हाथमें आ गअी। थामकर खड़े हो गये। कुछ देर सुस्ताये और फिर चल पड़े।

बड़ा नाज़ुक मौक़ा था। गांधीजी घिर गये थे। जानका ख़तरा था। अितनेमें अुधरसे अेक बहादुर गोरी महिला गुज़री। वह डरबनके पुलिस अफ़सरकी पत्नी थीं और गांधीजीको पहचानती थीं। वह दौड़कर गांधीजीके पास पहुँच गअीं और धूप न रहते हुअे भी, अुनके सर पर अपने छातेकी छाया करके साथ-साथ चलने लगीं।

गोरे सिटपिटा गये। अुन्हें अिस नेक और बहादुर औरतका लिहाज़ रखना ही पड़ा। भीड़ कुछ छँटी। लोग कुछ हटकर चलने

लगे। फिर भी बीच-बीचमें कुछ मनचले मर्दक दौड़कर आते और गांधीजीको चपतियाकर चले जाते थे। अुन्हें अिसीमें मज़ा आता था।

अितनेमें पुलिसका अेक दस्ता आ पहुँचा। अुसने शरारतियोंकी भीड़को तितर-बितर किया और गांधीजीको अुनकी अिच्छाके अनुसार अुनके मित्र और डरबनके मशहूर व्यापारी पारसी रुस्तमजीके घर पहुँचा दिया।

गोरोंकी वह शैतानी टोली अुस समय तो बिखर गअी; लेकिन रातमें फिर हज़ारों गोरे पारसी रुस्तमजीके घरके सामने अिकट्ठा हो गये और शोर मचाने लगे।

अुनकी अेक ही पुकार थी—अेक ही नारा :

'गांधीको सौंप दो, नहीं, घर फूँक देंगे।'

मगर रुस्तमजी थे कि टससे मस न हुअे।

अिस मौक़ेपर डरबनके पुलिस अफ़सरने बड़ी चतुराअीसे काम लिया! अुन्होंने अपने भरोसेके अेक अफ़सरको रुस्तमजीके घरमें भेजा। गांधीजीको सलाह दी कि वे भेस बदलकर वहाँसे खिसक जायँ। फिर .खुद लोगोंकी भीड़में जाकर मिल गये और अुसे बहलाने लगे।

अुन्होंने रुस्तमजीके दरवाज़ेके सामने अपने लिअे अेक तख्त रखवा लिया; अुसपर चढ़ गये और लोगोंसे गपशप लड़ाने लगे। अेक तुक जोड़ ली, और लोगोंसे गवाने लगे :

"आओ रे आओ! गांधीको लाओ!
ज़िन्दा जलाओ! फाँसी चढ़ाओ!
अिमलीके पेड़पर फाँसी चढ़ाओ!

लोग झूम-झूमकर गाने लगे।

अमलदारने अपने मनमें कहा: 'बच्चो, चिल्लाते रहो, जितना चिल्लाना चाहो! दरवाज़ा मेरे कब्ज़ेमें है। जाओगे किधर?'

बाहर यह तमाशा हो रहा था। अन्दर गांधीजी पुलिस अफ़सरकी भेजी हुअी देशी पुलिसकी पोशाक पहन रहे थे। गांधीजीको यह चीज़ जँची तो नहीं, मगर मजबूरी थी। जब पहन चुके, तो दोनों बग़लके तहख़ानोंमें घुसे। कुछ देरमें सिरेके अेक तहख़ानेका दरवाज़ा खुला! दो जवान अुसमेंसे बाहर निकले; दोनों बलवाअियोंकी भीड़में पैठे और बेदाग़ अुस पार निकल गये। अुनकी तरफ़ किसीने देखा तक नहीं। फ़ुरसत किसे थी, जो देखे?

लोग तो झूम-झूमकर उस तुकको गानेमें लगे थे:

"आओ रे आओ! गांधीको लाओ!
जिन्दा जलाओ! फाँसी चढ़ाओ!
अिलमीके पेड़पर फाँसी चढ़ाओ!"

जब पुलिस अफ़सरको ख़बर मिली कि गांधीजी सही-सलामत दूसरे मुक़ामपर पहुँच गये हैं, तो अुसने फ़ौरन बाज़ी अुलट दी, और लोगोंसे कहा: 'दोस्तो, अब आप थक गये होंगे। जाअिये, घर जाकर आराम कीजिये।'

लोग अेकदम पुकार अुठे: 'नहीं जायेंगे; हरगिज़ न जायेंगे। गांधी कहाँ है? गांधीको लाओ!'

अमलदारने अपने मनमें कहा: 'बच्चो, चिल्लाते रहो, जितना चिल्लाना चाहो! दरवाज़ा मेरे कब्ज़ेमें है। जाओगे किधर?'

अमलदारने ज़रा हँसकर कहा: 'मान लीजिये, आपका शिकार आपके सामनेसे निकल भागा हो, तो आप क्या कीजियेगा?'

‘ वाह, .खूब कही; निकल भागा हो ! कैसे निकल भागा हो ! हम अितने जो खड़े हैं, यहाँ ? ’

‘ तो मैं आपसे सच कहता हूँ कि आपका शिकार आप ही के बीचसे होकर निकल गया है । ’

‘ झूठ ! सरासर झूठ ! हम हरगिज़ न मानेंगे । ’

‘ अच्छी बात है; अगर अपने बूढ़े फ़ौजदारका आपको यक़ीन नहीं है, तो आप .खुद अन्दर जाकर देख लीजिये । लेकिन सब नहीं जा सकेंगे । अपनेमेंसे दो-चारको चुनकर भेज दीजिये । ’

लोगोंने पंचोंको अन्दर भेजा कि जाकर देख आवें । अुन्हें यक़ीन हो गया कि गांधीजी घरमें नहीं हैं । जब लोगोंने सुना, तो चकराये ! .खुशमिज़ाज फ़ौजदारने कहा : ‘ दोस्तो, आपने अपनी पुलिसकी बात नहीं रक्खी, तो पुलिसको आपसे छल करना पड़ा । हम लोग तो आपके नौकर ठहरे; किसी भी तरह अपना काम बजा लाना हमारा फ़र्ज़ है न ? अब आप मेहरबानी करके जाअिये । पुलिसकी जीत हुअी; आप लोगोंकी हार । ’

जो दाँत कटकटाते आये थे, वही खिलखिलाते हुअे लौट गये । अिस बवण्डरके बाद कअी दिन बीत गये । गांधीजीकी चोटें दुरुस्त हो गअीं । गोरोंके दिमाग़ ठण्डे पड़ गये । सब अपने-अपने काम-धन्धेसे लगे ।

मारपीट करनेवाले गोरोंका .खयाल था कि वह ‘ कुली ’ बैरिस्टर अुन्हें छोड़ेगा नहीं; मुक़दमा चलायेगा; सज़ा ठुकवायेगा ।

सरकारवाले रोज़ राह देखते थे कि गांधी आज शिकायत करेंगे, कल करेंगे ।

लेकिन गांधीजीका तो तरीक़ा ही कुछ और था ! दंगाअियोंको वे दयाकी दृष्टिसे देखते थे। मारनेवालोंको मन ही मन माफ़ कर चुके थे। वे जानते थे कि बेचारे नासमझ हैं।

अेक दिन गांधीजीको डरबनके अेक बड़े अफ़सरने बुलाया और कहा:

'गांधीजी, आपको जो चोट पहुँची, जो परेशानी अुठानी पड़ी, अुसके लिअे हम सचमुच दु:खी हैं। मानता हूँ कि जिन्होंने आपको सताया, वे सब गोरे थे। लेकिन गोरे हुअे, तो क्या हुआ ? वे गुनहगार हैं। सज़ावार हैं। यह न समझिये कि वे बच जायेंगे। सरकार चाहती है कि अुन्हें सज़ा हो। आप ज़रा अुनकी शनाख्त करवा दीजिये।

गांधीजीने बड़ी शान्तिके साथ कहा:

'अिस सहानुभूतिके लिअे मैं आपका आभारी हूँ। लेकिन दर असल मुझे किसीसे कोअी शिकायत नहीं।'

'आप अपराधियोंको पहचान तो सकते हैं न ?'

'शायद दो-चारको पहचान सकूँ ! लेकिन मैं मानता हूँ, अुन बेचारोंका कोअी कसूर नहीं है।'

'गांधीजी, आप यह क्या कहते हैं ? क्या अुन दुष्टोंने आपको पीटा नहीं ? सताया नहीं ?'

गांधीजीसे न रहा गया। अुन्होंने बिना झिझके साफ़-साफ़ गोरे हाकिमसे कह दिया: 'माफ़ कीजिये, असली गुनहगार तो आप लोग हैं। आप-जैसोंने अुन्हें अुभाड़ा और वे दंगाअी बन गये। अुन बेचारोंका कसूर क्या है ? अुन्हें सज़ा किस बातकी दिलाअूँ ?'

४१
हमारे पापका फल

जब गोरे हमें 'कुली कहते हैं, तो हम तिलमिला अुठते हैं। अब सोचिये कि जिनको हम ढेढ़, भंगी, अछूत वग़ैरा कहते हैं, अुन पर क्या बीतती होगी ?

हम अिन लोगोंका कितना अपमान करते हैं ? अिनसे न हम छूते हैं, न अिन्हें अपनी बस्तियोंमें रहने देते हैं, और न अपनी सड़कोंपर आज़ादीसे चलने देते हैं। जब कभी अिन्हें हमारे बीचसे निकलना पड़ता है, तो चिल्लाते-चिल्लाते बेचारोंका गला बैठ जाता है :

'दूर रहना, मा-बाप !'

'छूना नहीं, मालिक !'

'आप ही के भंगी हैं, 'अन्नदाता' !'

कैसा घोर अपमान है ?

बेचारे प्यासों मरते हैं, पर हम हैं कि अपने कुओंपर अुन्हें पानी तक नहीं भरने देते।

गाँवके सभी लड़के स्कूलमें पढ़ते हैं, पर अिनके लड़कोंको हम स्कूलका मुँह नहीं देखने देते। अुन्हें दाखिल नहीं करते। करते हैं, तो दूर अेक कोनेमें बैठाते हैं।

रेलगाड़ीमें सभी बैठते हैं, लेकिन ढेढ़, भंगी या चमारको देखते ही 'जगह नहीं, जगह नहीं' चिल्ला अुठते हैं।

मन्दिरमें गाँवके सभी लोग देव-दर्शनको जाते हैं। लेकिन अिन अभागोंके लिअे भगवानके घरके दरवाज़े भी बन्द हैं।

यह कोओ मामूली दु:ख है ? छोटी-मोटी बात है ?

ये बेचारे गजरदम अुठकर हमारी सड़कें बुहारते हैं, गटरें धोते हैं, गाँवको साफ़ रखते हैं, हमारे लिअे कपड़ा बुनकर देते हैं, जूते बनाते हैं, और फिर भी हम अिनसे फिरण्ट रहते हैं। अिन लोगोंकी अितनी बड़ी सेवाके बदलेमें हम अिन्हें क्या देते हैं? अपनी जूठन! अपमान, गाली, गन्दगी, ग़रीबी!

हमारे पापका अन्त नहीं है। फिर क्यों न देश-परदेशमें हमारी दुर्दशा हो? क्यों न हम जहाँ तहाँ ठुकराये जायँ? गांधीजी कहते हैं, कि हमारी ग़ुलामी हमारे अिन पापोंका ही फल है। भगवान्ने ही यह फल हमें दिया है। अिसीलिअे वे हरिजनोंकी सेवा करते हैं, अपनेको हरिजन समझते हैं, और लोगोंको समझाते हैं, कि हरिजनोंको छूनेमें पाप नहीं, पुण्य है।

४२

हरिजन पहले

अेक गाँवमें सभा रक्खी गअी थी। गांधीजी अुसमें बोलनेवाले थे।

गांधीजीका भाषण सुननेकी अिच्छा किसे न होगी? गाँवकी अठारहों जातके लोग आ-आकर अिकट्ठा होने लगे—ब्राह्मण आये, बनिये आये, ठाकुर आये, पटेल, पटवारी, ज़मींदार, चौधरी, नाअी, तेली, कुम्हार, चमार, बढ़अी, सभी कोअी आये।

ढेढ़ोंके मुहल्लेसे ढेढ़ भी आये। अुन्होंने सोचा: सभामें चलना चाहिअे। बापूजी पधारनेवाले हैं। अुनकी बातें सुननी चाहियें। अुनके दर्शन करने चाहियें। न जाना ठीक न होगा। वे भी आये।

सभावालोंने ढेढ़ोंको पहचान लिया। लोग चिल्ला अुठे: 'अरे ये तो ढेढ़ हैं! दूर, दूर! यहाँ नहीं; अुधर जाओ।'

दूसरोंने कहा: 'जाओ, बैरंग वापस हो जाओ! तुम्हें किसने बुलाया था? यहाँ तुम्हारा क्या काम है?'

बेचारोंपर चारों तरफ़से फटकारें पड़ने लगी! कोअी अुनकी मददपर आता ही न था।

ग़रीबोंने नरमीसे कहा: 'मालिक, हमें भी बैठने दो न! बापूजी तो हमारे भी हैं!'

किसीको दया न आअी। आख़िर सभावालोंको समझाकर ढेढ़ोंके लिअे कुछ दूरपर थोड़ी जगह दे दी गअी और अुनसे कह दिया गया: 'यहाँ बैठो, लेकिन ख़बरदार! किसीसे छूना नहीं। किसीके पास जाना नहीं।'

'नहीं मालिक! नहीं जायेंगे, यहीं बैठेंगे।'

सभामें ख़ासी भीड़ हो गअी। पैर रखनेको जगह न मिलती थी। समय हुआ और गांधीजी आये। 'वन्दे मातरम्' और 'महात्मा गांधीकी जय'के नारोंसे सभा-स्थान गूँज अुठा। दूर बैठे हुअे अुन हरिजन भाअियोंने भी जय-जयकारकी पुकारमें भाग लिया, और वे अुझक-अुझककर अपने बापूको देखने लगे।

आते ही गांधीजी सीधे मंचपर पहुँचे और भाषण करनेको खड़े रहे। अुन्होंने अेक नज़रमें सारी सभाका सिंहावलोकन कर लिया। बड़ी पैनी आँखें हैं अुनकी! दूर बैठे हुअे हरिजनोंकी अुस टोलीको अुन्होंने तुरन्त ताड़ लिया।

गाँववालोंको बुलाकर पूछा: 'वे लोग अलग क्यों बैठे हैं?'

'महात्माजी, वे ढेढ़ हैं।'

'क्या हर्ज है। अगर वे सबके साथ बैठें ?'

गाँववाले सोचमें पड़ गये; सर खुजलाने लगे।

'आप लोग अुन्हें सभामें न बुला सकें, तो मैं अुनमें जाकर ठूँगा और वहींसे भाषण करूँगा।'

बस, गाँधीजी मंचसे नीचे अुतर आये, और अपने प्यारे हरिजनोंके पास जा पहुँचे। गाँवके कुछ साहसी लोग भी अुनके साथ हो लिये। हरिजन भाअियोंकी .खुशीका ठिकाना न था! अुनके दिल बाँसों अुछल रहे थे। हृदय अुमड़े पड़ते थे। वे गद्गद कण्ठसे पुकार अुठे: 'बापूजीकी जय। जुग-जुग जीयें हमारे बापूजी।'

४३
आश्रममें हरिजन

गांधीजीने साबरमतीके किनारे अपना आश्रम खोला और अैलान किया कि कोअी भला हरिजन आश्रममें भर्ती होना चाहेगा, तो अुसे .खुशी-.खुशी भर्ती किया जायगा।

शहरके सेठोंने सोचा : 'गांधीजी तो यों ही कहते रहते हैं। मगर अैसे ठाले हरिजन हैं कहाँ जो आकर आश्रममें भर्ती होंगे?' लोग अिसी ख़यालमें मस्त रहे और गांधीजीके आश्रमको पैसे-टकेसे अिमदाद पहुँचाते रहे। आश्रमके ख़र्चेके बारेमें लोगोंने गांधीजीको बिलकुल बेफ़िकर बना दिया।

कुछ दिन अैसे ही बीत गये। अेक दिन अचानक अेक हरिजन परिवार आश्रममें आ धमका! औरत, मर्द और दुधमुँही बच्ची! तीन प्राणी थे। साथमें ठक्कर बापाकी सिफ़ारिश थी।

गांधीजीने सोचा: 'बस, परीक्षाका समय आ गया। भगवान् अब कसौटीपर चढ़ाना चाहता है। अिसीलिअे अुसने अिनको भेजा है।'

आये हुअे हरिजनसे पूछा — 'आश्रमके नियम तो जानते हो न?'

'जी हाँ।'

'नियमोंका पालन कर सकोगे?'

'जी हाँ, कोशिश करेंगे।'

'बड़ी अच्छी बात है। आप लोग सुखसे यहाँ रहिये, और आश्रमको अपना घर समझिये।'

अिस तरह अेक हरिजन परिवार आश्रमवासी बना। तीनों प्राणी सबके साथ रहते, सबमें मिलकर काम करते, और सबकी बराबरीसे बैठकर खाते।

आश्रममें सब लोग अेक-सी समझके नहीं थे। कअियोंको यह बुरा लगा। अुनके दिलमें खलबली मच गअी। लेकिन गांधीजीने सबको साफ़ साफ़ कह दिया —

'मेरे लिअे तो हरिजन पहले हैं। जिनसे अिस धर्मका पालन न हो, वे ख़ुशी ख़ुशी आश्रम छोड़ सकते हैं; फिर चाहे वह मेरी पत्नी हो, चाहे पुत्र हो।'

बात बिजलीकी तरह बस्तीभरमें फैल गअी कि गांधीके आश्रममें अेक ढेढ़ रहने लगा है।

जो सेठ-साहूकार गांधीजीकी मदद करते थे, लेकिन कट्टर सनातनी थे, वे चौंक पड़े। अुन्होंने मदद बन्द कर दी। वे कहने लगे — 'भला आदमी जो कहता था, वही करने भी लग गया। ये तो धरम डुबोनेके ढंग हैं। अैसे अधर्मीकी कौन मदद करे?'

मगनलाल गांधी आश्रमके व्यवस्थापक थे। अुन्हें फ़िकर हुअी। वे अेक दिन छोटा-सा मुँह लेकर गांधीजीके पास आये और बोले — 'बापू, थैली तो अभीसे हलकी-हलकी है। अगले महीने क्या होगा?'

गांधीजीने ढाढ़स दिलाते हुअे कहा — 'भगवान् पर भरोसा रक्खो। जब कुछ नहीं रहेगा, तो हम ढेढ़ोंकी बस्तीमें जाकर बस जायेंगे, मज़दूरी करेंगे और पेट पालेंगे, मगर सचाअीसे तिलभर भी न हटेंगे!'

४४
दो अैतिहासिक कूच

अपने सत्याग्रहकी लड़ाअीमें गांधीजी कभी-कभी कूचका भी कार्यक्रम रखते हैं। सत्याग्रहकी अैसी अेक कूच अुन्होंने दक्षिण अफ्रीकामें की थी और दूसरी हिन्दुस्तानमें। हिन्दुस्तानवाली कूच दाँडीकूचके नामसे मशहूर है।

दक्षिण अफ्रीकाके सत्याग्रहमें जब सरकारने मनमानीपर कमर कस ली, तो गांधीजीने तीन पौण्डवाले 'जज़िया' के खिलाफ़ लड़ाअी छेड़ दी, और हजारों गिरमिटिया मज़दूरोंको लड़ाअीमें शामिल होनेकी

दावत दी। मज़दूरोंने धड़ाधड़ खेतों और कारख़ानोंसे रुख़सत ली और गांधीजीके झण्डे तले आ डटे।

अब गांधीजी सोचने लगे कि सत्याग्रहका वह कौन तरीक़ा होगा, जिससे मजबूर होकर सरकारको हज़ारों सत्याग्रहियोंकी मुश्कें बाँधनी पड़ें — हज़ारोंको जेल भेजनेका अिन्तज़ाम करना पड़े।

आख़िर गांधीजीको अेक अैसा तरीक़ा सूझा, जिसका किसीको सपना भी न था। अुन्होंने अैलान कर दिया कि वे अपने भारी क़ाफ़िलेके साथ पैदल कूच करेंगे, और बिना परवानेके ट्रान्सवालकी हदमें घुसकर परवानोंका क़ानून तोड़ेंगे।

बस, कूचका दिन तय हो गया। कूच शुरू हो गअी। २,२११ आदमियोंका वह क़ाफ़िला क्या था, अेक छोटी-मोटी निहत्थी फ़ौज ही थी! अुस क़ाफ़िलेमें मर्दोंके साथ १२७ औरतें भी थीं। मज़दूर अपने बाल-बच्चोंको साथ लिये कूच कर रहे थे! अपना-अपना सामान सब अपने कन्धोंपर लादे चले जा रहे थे।

क़ाफ़िला अेक हद छोड़कर दूसरी हदमें जा पहुँचा। परवानेका क़ानून टूट गया। मगर सरकार मिनकी तक नहीं। रात, जब सब लोग खा-पीकर सो रहे, तो पुलिस चुपकेसे आअी और गांधीजीको गिरफ़्तार करके ले गअी।

सबेरे साथियोंको पता चला। लोगोंके जोशका ठिकाना न रहा। अुन्होंने नये जोशसे कूच शुरू कर दी। दूसरे दिन गांधीजी जमानत पर छोड़ दिये गये। छूटते ही वे अपने दलमें आ मिले। लोगोंका अुत्साह चौगुना हो गया।

अगले मुक़ामपर सरकारने गांधीजीको फिर गिरफ़्तार किया, फिर जमानतपर छोड़ा और गांधीजी फिर अपने साथियोंके बीच आ पहुँचे। लोगोंके हर्षका पार न रहा।

अिस क़ाफ़िलेको बड़ी लम्बी-लम्बी मंजिलें तय करनी पड़ती थीं। दूरका रास्ता था। राहमें अेक बच्चा बीमार पड़ा और मर गया। सारी छावनीमें शोक (मातम) छा गया। लोगोंने बहादुरीके साथ अिस चोटको सहा और आगे बढ़ चले।

जैसे ही पड़ाव पड़ता, लोग सोने-बैठने, खाने-पीने, और झाड़ने-बुहारनेकी तैयारियोंमें जुट पड़ते; किसीको दम मारनेकी .फ़ुरसत न रहती। जहाँ पड़ाव होता, वहाँके हिन्दुस्तानी व्यापारी बड़े प्रेमसे क़ाफ़िलेवालोंके लिअे खाने-पीनेका सामान पहुँचा देते।

तीसरी बार जब सरकारने गांधीजीको पकड़ा, तो फिर पकड़ा ही पकड़ा। जमानतपर भी न छोड़ा। मुक़दमा चलाया और सज़ा ठोक दी। गांधीजी जेल चले गये।

अगले मुक़ामपर सरकारने सब सत्याग्रहियोंको भी दल-बलके साथ गिरफ़्तार कर लिया और दो स्पेशल गाड़ियोंमें चढ़ाकर रवाना कर दिया।

दाँडीकूच तो अभी कल ही की बात है। अुसे कौन नहीं जानता? जब गांधीजीने पूर्ण स्वराज्य या मुकम्मल आज़ादीके लिअे जंग छेड़नेका बीड़ा अुठाया, तो अुनके सामने सवाल पैदा हुआ कि सत्याग्रहियोंके लिअे जेलख़ानोंके दरवाज़े क्यों कर खुलें। अुन्होंने छान-बीन शुरू की। कअी बातें सोची गअीं; कअी सुझाअी गअीं;

अन्तमें नमकका क़ानून तोड़नेकी बात तय पाअी। गांधीजीको वही जँच गअी।

नमकका क़ानून तोड़नेके लिअे गांधीजीने दाँडीकूचका कार्यक्रम बनाया और कूच शुरू करनेसे पहले यह भीषण प्रतिज्ञा की — 'जंगल-जंगल भटकूँगा; दर-दरकी ख़ाक छानूँगा; कौअे-कुत्तेकी मौत मरूँगा; लेकिन मुकम्मल आज़ादीके बिना, सम्पूर्ण स्वराज्यके बिना, वापस आश्रममें पैर न रक्खूँगा।' बस, अिस प्रतिज्ञाके साथ वे चल पड़े।

कार्यक्रम यह बनाया कि साबरमती आश्रमसे पैदल चलेंगे। गुजरातके गाँवों और शहरोंमें ठहरते हुअे चलेंगे। अन्तमें समुद्रके किनारे दाँडी तक पहुँचकर वहाँ .खुद नमक बनावेंगे, और नमकका क़ानून तोड़कर मुल्कमें लड़ाअीका अैलान करेंगे।

आश्रमके ८० साथियोंका अेक दल बनाकर गांधीजी १२ मार्च, १९३० को साबरमतीसे चल पड़े। सुबह-शाम चलते; दुपहरमें और रातमें मुक़ाम करते; मुक़ामपर पहुँचकर लोग खाते-पीते, चर्खा और तकली चलाते; और गांधीजी लोगोंको आज़ादीकी लड़ाअीका सन्देश या पैग़ाम सुनाते। जहाँ जहाँ कूचवाले जाते, जहाँ वे ठहरते, जिन गाँवों और शहरोंके पाससे होकर निकलते, वहाँ लोगोंके दलके दल अुनके दर्शनोंको अुमड़े चले आते। अपने बापूको देखकर और बापूकी वाणी सुनकर वे गद्गद हो अुठते — अुनकी आँखोंमें .खुशीके आँसू छलछला आते।

लोग रोज़ सोचते कि आज गिरफ़्तार होंगे, कल गिरफ़्तार होंगे; और रोज़ अुनकी अटकलें झूठी पड़तीं। आख़िर गांधीजी दाँडी

पहुँचे; वहाँ समुद्रमें नहाये; समुद्रके पानीसे नमक बनाया और नमकका क़ानून तोड़ा। फिर भी सरकार चुप रही; अुसने गांधीजीकी गिरफ़्तारी का हुक्म न छोड़ा।

सारे देशमें नमकका क़ानून टूटने लगा — लोग घर घर नमक बनाने और क़ानून तोड़ने लगे।

सरकारी दमन शुरू हो गया; लोग गिरफ़्तार होने लगे; जहाँ तहाँ लाठियों और डण्डोंके ज़ोरसे सभायें तोड़ी जाने लगीं; कअी जगह औरतोंपर लाठियाँ चलीं, बच्चोंपर डण्डे बरसे। अिन ख़बरोंसे गांधीजी बेचैन हो अुठे। वे सोचने लगे — 'ये डण्डे औरतों और बच्चोंपर न बरसकर मुझपर बरसने चाहियें। मैं क्या करूँ? कैसे ये मुझपर बरसें?'

आख़िर अुन्होंने धारासणापर धावा करनेका, वहाँके सरकारी नमकको लूटनेका, निश्चय किया। लेकिन लूटके लिअे जिस दिन कूच करनेवाले थे, अुसके अेक दिन पहले ही रातमें पुलिस आअी और चुपकेसे गांधीजीको चुरा ले गअी। फिर अुनके साथियोंने धारासणा पर धावा बोला।

४५

राष्ट्रीय अुपवास

पंजाबमें मातृभूमिका, मादरे हिन्दका, घोर अपमान हुआ था। अिस अपमानसे सबके दिलोंमें अेक आग जल अुठी थी, और सारे मुल्कने मिलकर सत्याग्रह करनेका निश्चय किया था।

लेकिन यह अितना बड़ा काम, भगीरथ काम, शुरू कैसे किया जाय? गाँव-गाँवमें और नगर–नगरमें सभायें करके? हाँ, यह अेक करने लायक़ काम है। लेकिन गांधीजीको सिर्फ़ सभाओंसे सन्तोष क्योंकर हो?

अच्छा तो गाँव-गाँव और शहर-शहरमें हड़ताल मनाअी जाय?

ठीक है, अिससे भी हमारा क़दम कुछ आगे तो बढ़ता है; लेकिन गांधीजीकी तसल्लीके लिअे यह भी काफ़ी न था। वे तो किसी ज्यादा बड़ी चीजके लिअे तड़प रहे थे। आख़िर अेक बात सूझी। तय किया गया कि देशके सब लोग अेक ही दिन अिस सिरेसे अुस सिरे तक फ़ाक़ा करें, अुपवास रक्खें।

सन् १९२१ का साल था और अप्रैल महीनेकी १३ वीं तारीख़। गांधीजीका सन्देश, अुनका पैग़ाम, देशभरमें फैल चुका था। अुस दिन देशके अिस कोनेसे अुस कोने तक लोगोंने व्रत रक्खा, फ़ाक़ा किया, शामको प्रार्थनामें शामिल हुअे, दुआयें कीं। वह अेक अैसा दिन था, जब अिस बड़े भारी मुल्कमें, अिस विशाल देशमें, तीस करोड़ औरत और मर्द नहीं थे, बल्कि तीस करोड़ सिरोंवाला और साठ करोड़ हाथ-पैरोंवाला अेक ही 'राष्ट्रपुरुष' था। अुस दिन देश अेक हो गया था। राष्ट्रीय अेकताका वह अेक अनोखा दृश्य था।

राष्ट्रीय अुपवासका वह दिन हिन्दुस्तानके अितिहासमें अमर हो चुका है।

४६

प्रेमके अुपवास

देशका बच्चा-बच्चा जानता है कि गांधीजी क्या चाहते हैं। वे चाहते हैं —

कोअी किसीको न मारे। कोअी किसीको न सताये।

यही अुनका अुपदेश है। यही वह चाहते हैं।

यही वजह है कि जो बालक अुनकी राष्ट्रीय शालाओंमें या क़ौमी मदरसोंमें पढ़ते हैं, वे नहीं जानते कि मार किस चिड़ियाका नाम है। वहाँ बच्चोंको मारपीटका जरा भी डर नहीं रहता। अगर कोअी शिक्षक मारने अुठता है, तो बालक खड़ा होकर पूछ सकता है — 'गांधीजी तो मारपीटको बुरा समझते हैं, फिर आप मारते क्यों हैं?'

बच्चोंसे ग़लती हो जानेपर भी गांधीजी अुन्हें मारते नहीं; न तानों-तिश्नोंसे अुन्हें शरमाते और बेअिज़्ज़त ही करते हैं। लेकिन जब बच्चोंसे कोअी बड़ा गुनाह, बड़ी ग़लती हो जाती है, तो गांधीजी अुसकी सज़ा .खुद भुगत लेते हैं — .खुद भूखों रह जाते हैं। यह अुनका अपना तरीक़ा है।

अेक दफ़ा अुन्होंने अिसी तरह आठ दिनके और दूसरी दफ़ा चौदह दिनके अुपवास किये थे। वे कहते हैं, बच्चोंके दोषके लिअे, अुनकी ग़लतियोंके लिअे, मैं अुनपर .गुस्सा क्यों होअूँ? .खुद मेरे अन्दर अैसी कोअी बुराअी होनी चाहिये, जिससे बालकको भी बुरा काम करनेकी बात सूझी। अगर मैं पवित्र हूँ, तो मेरे पास रहनेवाले बालक अपवित्र कैसे हो सकते हैं? मैं पाक़ और ये नापाक़ क्यों?

अगर मैं सच्चे मानोंमें अहिंसक हूँ, अहिंसाका ठीक-ठीक पालन करता हूँ, तो यह हो नहीं सकता कि कोअी बालक मुझसे डरे — अपनी ग़लतियाँ मुझसे छिपावे ।

बस, अिन्हीं विचारोंके कारण गांधीजी अैसे मौक़ोंपर ख़ुद अुपवास कर लेते हैं । बच्चोंको सज़ा नहीं देते ।

अब कौन अैसा बालक होगा, जो अिस अपार प्रेमके आगे अपना सर न झुकायेगा ?

४७

महान् उपवास

गांधीजीने हिन्दुओं और मुसलमानोंको बहुतेरा समझाया, लेकिन वे लड़नेसे बाज़ न आये ।

गांधीजीने कहा : 'भाअियों, हम अेक ही देशकी सन्तान हैं । हमें लड़ना न चाहिये ।'

लेकिन लड़ाअी मिटी नहीं ।

गांधीजीने फिर कहा : 'सोचो तो, हमारे बाप-दादे किस तरह मिल-जुलकर रहते थे ।'

तो भी झगड़े तो होते ही रहे ।

गांधीजीने समझाया : 'लड़नेमें किसीकी ख़ानदानी नज़र नहीं आती । आप लोग हिलमिलकर रहिये, और लड़ना-झगड़ना बन्द कर दीजिये ।'

पर किसीने अुनकी बातपर कान न दिया। लड़ाअीके जोशमें ख़ानदानियतकी परवाह कौन करे ?

गांधीजीने चेतावनी देते हुअे कहा : 'याद रखिये, जब तक आप अेक न होंगे, आपको स्वराज्य भी नहीं मिलेगा।'

लेकिन जहाँ दिमाग़में गुस्सा भरा हो, वहाँ स्वराज्यकी बातें कौन सुनता ?

गांधीजीने फिर चेताया और कहा : 'देखो, दोकी लड़ाअीमें तीसरेका फ़ायदा हो रहा है। ज़रा आँखें खोलकर देखो।'

पर आँखें तो मारे ग़ुस्सेके अन्धी हो रही थीं। वे क्योंकर खुलतीं ?

आख़िर जब गांधीजी कहते-कहते थक गये और किसीने अुनकी न सुनी, तो जानते हो अुन्होंने क्या किया ?

बस, अेक दिन २१ दिनके अुपवासका कठिन व्रत लेकर बैठ गये।

अुन दिनों गांधीजी दिल्लीमें थे आर महान् मुसलमान डॉक्टर अन्सारीके घर रहते थे। वहीं अुन्होंने अपने २१ दिनके अुपवास शुरू किये। गांधीजी हँसते-हँसते भूखकी पीड़ायें सहते, और अन्सारीजी गद्गद भावसे अुपवासी गांधीजीकी सेवा करते।

४८

स्वराज्य

हिन्दुस्तानके दादा मरहूम (स्वर्गीय) दादाभाअी नौरोजीने देशके सामने स्वराज्यका मंत्र रक्खा।

स्वर्गीय लोकमान्य तिलकने अुसे गाँव-गाँव और घर-घर पहुँचाया।

गांधीजीने गाँव-गाँवमें और घर-घरमें स्वराज्यके लिअे यज्ञ शुरू कराया — क़ुर्बानीका सिलसिला चलाया।

हिन्दुस्तानके दादाने किताबोंको मथ-मथकर यह पता लगाया कि अिस मुल्ककी बड़ी से बड़ी बीमारी भूख है।

तिलक महाराजने छः साल तक जेलके अन्दर बन्द रहकर देशवालोंको यह सिखाया कि स्वराज्य ही अिस भूखको मिटा सकता है।

अब गांधीजी अपनी तपस्यासे देशको अेक नया पाठ, नया सबक सिखा रहे हैं। वे कहते हैं —

'देशकी बीमारी स्वराजसे ही मिटेगी, और स्वराज्य खादीसे ही मिलेगा।'

यह न समझो कि स्वराजकी लड़ाअी बड़े-बड़े लड़वैये ही लड़ सकते हैं। नहीं, छोटे-छोटे बच्चे भी अुसमें सिपाहीका काम कर सकते हैं। अगर तुम स्वराज्यकी सेनाके सिपाही बनना चाहते हो, तो नीचे लिखे काम करनेका निश्चय कर लो और स्वराज्यके सैनिक बन जाओ।

१. विदेशी कपड़ा पहनना छोड़ दो, और शुद्ध खादी पहनने लगो।

२. देशकी आज़ादीके लिअे रोज़ सूत कातो।

३. गुलामीको बढ़ानेवाली तालीमसे परहेज़ करो। अैसी तालीम लो, अैसे मदरसोंमें पढ़ो, जहाँ पढ़नेसे दिलमें देशभक्तिके भाव पैदा हों।

४. अपनी मातृभाषा (मादरी ज़बान) और राष्ट्रभाषा (क़ौमी ज़बान) को अच्छी तरह सीखो। अंग्रेज़ीको पराअी माँ समझो, और अुसके दूधकी ज़्यादा अुम्मीद न रक्खो।

५. यह समझ लो कि हमारा हिन्दुस्तान गाँवोंका देश है, जिसमें लाखों गाँव हैं; और गाँवोंमें ग़रीबीका पार नहीं है। अिन गाँवोंसे प्रेम करना सीखो। गाँवोंमें जाकर बसनेके सपने देखो। गाँवकी बनी हुअी चीज़ोंका अुपयोग अभिमानके साथ करो।

६. हरिजनोंके बच्चोंको अपने पास प्रेमसे बैठने और पढ़ने दो। अगर हम चाहते हैं कि हमें स्वराज्य मिले, तो हमारा फ़र्ज़ है कि हम सबसे पहले हरिजनोंको पूरा-पूरा स्वराज्य दे दें।

४९

अंग्रेज़ोंसे

गांधीजीने 'हिन्द स्वराज्य' नामकी अेक किताब लिखी है। अुसमें अुन्होंने स्वराज्यके बारेमें अपने विचार बहुत विस्तारसे समझाये हैं। किताब सम्पादक और पाठकके बीच हुअी अेक बातचीतके ढंगपर लिखी गअी है।

पाठक पूछता है : 'अंग्रेज़ोंसे आप क्या कहेंगे?'

हम भी यही सवाल पूछना चाहते हैं।

सम्पादककी हैसियतसे गांधीजीने अिस सवालका नीचे लिखा जवाब दिया है। अिस जवाबसे हमें गांधीजीके विचारोंको समझनेका मौक़ा मिलता है।

सम्पादक कहता है:

'मैं अुनसे (अंग्रेज़ोंसे) निहायत नरमीके साथ कहूँगा कि आप हमारे राजा ज़रूर हैं। अपनी तलवारके ज़ोरसे हैं, या हमारी मरज़ीसे, अिस सवालकी बहसमें पड़नेकी मुझे कोअी ज़रूरत नहीं है। आप मेरे देशमें रहना चाहें, रहें; मुझे आपसे कोअी दुश्मनी नहीं। लेकिन राजा होते हुअे भी रिआयाके सामने तो आपको नौकरकी तरह ही रहना होगा। आपका हुक्म हमें नहीं, बल्कि हमारा हुक्म आपको मानना होगा।

अब तक आप यहाँसे जो धन ले गये, सो तो आप हज़म कर गये; लेकिन अब आगे अैसा न हो सकेगा।

आप हिन्दुस्तानकी रखवालीके लिअे यहाँ रहना चाहें, तो रह सकते हैं, लेकिन हमारे साथ व्यापार करके हमें लूटनेका लालच तो आपको छोड़ ही देना होगा।

आप जिस सभ्यताके हामी हैं, हम अुसे सभ्यता ही नहीं समझते। अपनी सभ्यताको हम आपकी सभ्यतासे कहीं अच्छी समझते हैं। आप भी अिसको समझ लें, तो आपका फ़ायदा ही है। लेकिन अगर आपको यह न सूझे, तो भी आप ही की अेक कहावतके मुताबिक़ आपको हमारे देशमें देशी बनकर रहना चाहिये।

आपको अैसा कोअी काम न करना चाहिये, जो हमारे धर्ममें रुकावट डाले। हाकिमकी हैसियतसे आपका यह फ़र्ज़ है कि आप

हिन्दुओंके ख़ातिर गायका और मुसलमानोंके ख़ातिर सुअरका मांस खाना छोड़ दें। अब तक हम दबे हुअे थे, अिससे कुछ कह नहीं पाये; लेकिन आप यह न समझिये कि हमारे दिल दुखे नहीं हैं। हम अपनी .ख़ुदग़र्ज़ी और अपने दब्बूपनसे अब तक कुछ कह नहीं सके, लेकिन अब तो कहना हमारा फ़र्ज़ हो गया है।

हम मानते हैं कि आपके खोले हुअे मदरसे और आपकी अदालतें हमारे किसी कामकी नहीं। अुनके बदले हमें अपनी असली अदालतें और असली मदरसे खोलने होंगे।

हिन्दुस्तानकी भाषा अंग्रेजी नहीं, हिन्दुस्तानी है। वह आपको सीखनी होगी और हम तो अपना सारा व्यवहार आपसे अपनी ही भाषामें रख सकेंगे।

आप जिस तरह रेलों और फ़ौजोंपर पानीकी तरह पैसा बहाते हैं, अुसे हम सह नहीं सकते। हमें अुसकी कोअी ज़रूरत नहीं मालूम होती। आपको रूसका डर होगा। हमें नहीं है। जब वे आयेंगे, हम देख लेंगे। अगर अुस वक़्त आप भी रहे, तो दोनों मिलकर देख लेंगे।

हमें विलायत या यूरोपके कपड़ेकी ज़रूरत नहीं है। हम तो अपने देशमें बनी चीज़ोंसे अपना काम चला लेंगे। यह हो नहीं सकता कि आप अेक आँख मैंचेस्टरपर रक्खें और दूसरी हमपर।

जब आप समझ लेंगे कि हमारा और आपका अेक ही स्वार्थ है, और अुसी तरह बरतेंगे, तभी हम आपको साथ दे सकेंगे।

मैं आपके साथ गुस्ताख़ीसे पेश नहीं आ रहा हूँ। मेरा मतलब साफ़ है। आपके पास हथियारोंकी ताक़त है। ज़बर्दस्त जहाज़ी बेड़ा है। अिनका मुक़ाबला हम अिन्हीं चीज़ोंसे नहीं कर सकते। फिर भी

अूपर जो कुछ कहा है, वह आपको मंजूर न हो, तो हम आपके साथ रह नहीं सकते। आप चाहें, और आपसे हो सके, तो आप हमें क़त्ल कर डालिये। जी चाहे, तोपसे अुड़ा दीजिये। लेकिन जो चीज़ हमें पसन्द नहीं है, अुसमें हम आपकी हरगिज़ मदद न करेंगे; और बिना हमारी मददके आप अेक क़दम भी बढ़ न सकेंगे।

मुमकिन है कि हुकूमतकी मस्तीमें, सत्ताके घमण्डमें, आप हमारी अिस बातको हँसीमें अुड़ा दें। और हो सकता है कि हम फ़ौरन ही आपको यह न दिखा सकें कि अिस तरह हँसना बेकार है। लेकिन अगर हममें ताक़त होगी, तो आप देखेंगे कि आपकी यह मस्ती निकम्मी थी, और हँसी अुल्टी अक़्लकी निशानी थी।

हम मानते हैं कि दिलसे आप भी अेक अैसी क़ौमके लोग हैं, जो धर्मको मानती है। हम तो धर्मभूमिके ही निवासी हैं। आपका हमारा साथ कैसे हुआ, अिसकी बहसमें पड़ना फ़िज़ूल है। लेकिन अपने अिस सम्बन्धका अुपयोग हम अच्छे काममें कर सकते हैं। जो अंग्रेज़ हिन्दुस्तानमें आते हैं, वे अंग्रेज़ी प्रजाके सच्चे नुमाअिन्दे या प्रतिनिधि नहीं होते। अिसी तरह हम लोग भी, जो आधे अंग्रेज़ बन गये हैं, अपनेको हिन्दुस्तानकी असली प्रजाके सच्चे प्रतिनिधि नहीं कह सकते। अगर विलायतके अंग्रेज़ोंको हिन्दुस्तानकी हुकूमतका कच्चा चिट्ठा मालूम हो जाय, तो वे ज़रूर आपका विरोध करेंगे। हिन्दुस्तानके लोगोंने तो आपके साथ नाम-मात्रका ही सम्बन्ध रक्खा है।

अगर आप अपनी सभ्यताको, जो दर असल सभ्यता नहीं है, छोड़ देंगे और अपने धर्मका विचार करेंगे, तो आप ख़ुद महसूस करेंगे

कि हमारी माँग वाजिब और मुनासिब है। अिसी तरह आप हिन्दुस्तानमें रह सकते हैं।

अगर आप अिस तरह रहेंगे, तो हमें आपसे जो कुछ सीखना है, हम सीखेंगे; और हमसे आपको जो बहुत-कुछ सीखना है, आप सीखियेगा! अिस तरीक़ेसे हम दोनों फ़ायदेमें रहेंगे और दुनियाको भी फ़ायदा पहुँचायेंगे। लेकिन यह होगा तभी, जब हमारा और आपका सम्बन्ध धर्मकी नींवपर क़ायम किया जायगा — अुसकी तहमें धर्म होगा।

५०

प्रेम

क्या बात है कि हम सब गांधीजीसे अितना ज्यादा प्रेम करते हैं?

बात यह है कि अुनके दिलमें हमारे लिअे प्रेम ही प्रेम भरा हुआ है।

क्या वजह है कि गांधीजीसे किसीको कोअी दुश्मनी नहीं?

वजह यह है कि अुनके दिलमें किसीके लिअे कभी दुश्मनीके ख़याल ही नहीं आते।

गांधीजी अंग्रेज़ सरकारके अत्याचारोंका कड़ेसे कड़ा विरोध करते हैं, फिर भी बहुतेरे अंग्रेज़ हैं, जो गांधीजीसे मुहब्बत रखते हैं: अिसलिअे कि गांधीजीके मनमें अंग्रेज़ोंके लिअे भी प्रेम ही प्रेम भरा हुआ है।

तुमसे कोअी काम बिगड़ जाय, कोअी ग़लती हो जाय, और मैं तुमपर ग़ुस्सा होअूँ, तो अिसमें मेरी बड़ाअी क्या? अैसा तो जानवर

भी करते हैं । आदमी वह है, जो गुनहगारोंको भी अपने प्यारसे नहलाता रहे; प्रेमके साथ अुनकी शरारतोंको सहता रहे ।

गांधीजी अैसा ही करते हैं । वे किसीसे दुश्मनी नहीं रखते; अिसीलिअे अुन्हें भी कोअी अपना दुश्मन नहीं समझता । वे सबको अपने प्रेमसे नहलाते रहते हैं, अिसीसे हमारे दिलोंमें भी अुनके लिअे प्रेम ही प्रेम भरा रहता है ।

५१

गांधीजीकी अहिंसा

'अहिंसासे तुम क्या समझे ?'

'किसीकी हिंसा न करना । किसीको न मारना; न सताना ।'

'वैसे, किसीके लिअे मनमें .गुस्सा रखना भी हिंसा ही है । अिसलिअे मनमें अिस तरहकी हिंसाको भी जगह न देना, और मनके कोने कोनेको प्रेमसे भरे रहना अहिंसा है ।'

'लेकिन जब कोअी हमपर हमला करे, तो हम अहिंसाका पालन कैसे करें ?'

'सच पूछो तो अैसे वक़्त ही अहिंसाकी सच्ची परीक्षा होती है । जब कोअी सताता नहीं, .गुस्सा होता नहीं, तब तो कुत्ते-बिल्ली भी अहिंसक रह लेते हैं । लेकिन वह अहिंसा किस कामकी ?'

'अगर अिस तरह हर किसीकी मार खाकर बैठ जायें, तो दुनिया हमें डरपोक न कहेगी ?'

'डरपोक क्यों कहेगी ? हम मार खाकर न तो रोते हैं, और न मारके डरसे भागते ही हैं। प्रेमके कारण हमें .गुस्सा नहीं आता, हम किसीपर हाथ नहीं अुठाते, तो डरपोक कैसे बन जाते हैं ?'

'भाअी, यह तो बड़ी टेढ़ी खीर है। मारनेवालेको न मारना, सतानेवालेसे प्यार करना, बहुत ही मुश्किल है। अिससे अच्छा और आसान तो यह है कि जो हमें मारे, अुसे हम भी मार दें।'

'सच कहते हो। अहिंसक बनना आसान नहीं है। अहिंसाका मार्ग शूरोंका है। अहिंसा शेर दिलोंकी है, कायरों और डरपोकोंकी नहीं।'

गांधीजी अैसी ही अहिंसाका पालन करते हैं, और हमसे भी कहते हैं कि हम सच्चे अहिंसक बनें।

५२

आत्मबल

आज दुनियामें मार-धाड़ करनेवालोंका बड़ा जोर है। वे कहते हैं: 'अिसने हमें सलाम नहीं किया, हम अिसे मार डालेंगे।'

गांधीजी हाथ अुठाकर और पुकार-पुकारकर कहते हैं :

'अय भारतवासियो, तुम न तो अिस कोलाहलमें शामिल होओ, न अिससे डरकर भागो। तुम अपनी अहिंसापर डटे रहो! जब सारी दुनिया लड़-झगड़कर थक जायगी, तो हमींसे अहिंसा सीखने आयेगी।

'कोअी अपने मनमें यह डर न रक्खो कि अगर हम अहिंसाका पालन करेंगे, तो सब मिलकर हमें मार डालेंगे। तुम अहिंसाको पहचानते नहीं, अिसी कारण अुससे डरा करते हो। अहिंसा वह चीज़ है, जिससे दुश्मन भी दोस्त बन जाते हैं।'

दुनियाके लोगोंको गांधीजीके अिस अुपदेशपर विश्वास नहीं बैठता। अुन्हें अिसकी सच्चाअीका अितमीनान नहीं होता।

अगर किसी देशके पास अेक लाख फ़ौज है, तो दूसरा पाँच लाख रखता है, और तीसरा दस लाख।

अेक देशके पास सौ लड़ाकू जहाज़ हैं, तो दूसरेके पास दस सौ, और तीसरेके पास दस हज़ार।

अगर अेक देश सौ हवाअी जहाज़ रखता है, तो दूसरा पाँच सौ, और तीसरा पाँच हज़ार।

जिसके पास जितने कम हवाअी जहाज़ हैं, अुसे अुतनी ही कम नींद आती है, और अुसपर रातदिन अपने जहाज़ोंकी संख्या बढ़ानेकी फ़िक्र सवार रहती है।

फिर ये विमान, ये यान, मुफ़्तमें नहीं बनते।

अिनके पीछे करोड़ों-अरबों रुपयोंका धुआँ अुड़ जाता है।

ये करोड़ों आते कहाँसे हैं?

आते हैं प्रजाके पसीने और प्रजाके खूनसे।

गांधीजीने अहिंसाके जो हथियार हमें दिये हैं, वे ये हैं:

सत्याग्रह।

असहयोग।

बलिदान।

हँसते हँसते मुसीबतोंका सामना करनेवाली जनताको देखकर अत्याचारीका अत्याचार निस्तेज हो जाता है। जल्लादके हाथ काँप अुठते हैं। शिकारको कराहते देखकर ही न शिकारीका दिल नाचता है!

तो बताअिये कौन ताक़त बड़ी है? तोपकी या अहिंसाकी? कौन बल बड़ा है? तोप-तलवारका या आत्माका?

गांधीजी सुनी या पढ़ी हुअी बात नहीं कहते। तरह तरहके संकट सहन करके अुन्होंने अहिंसारूपी रत्न पाया है।

अहिंसामें ही भारतवर्षका अुद्धार और जय जयकार है।